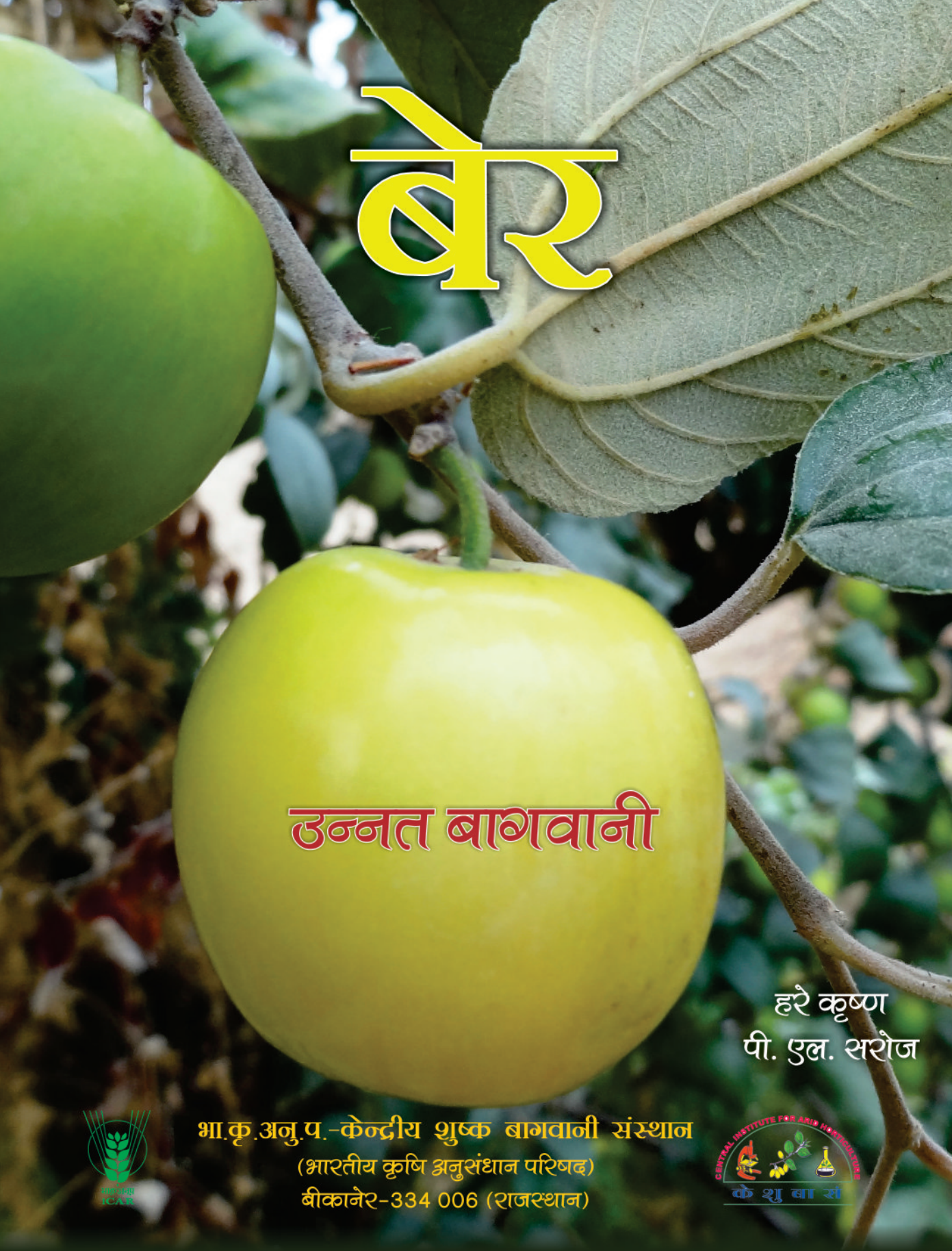

बेर

उन्नत बागवानी

हरे कृष्ण
पी. एल. सरोज

भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
बीकानेर-334 006 (राजस्थान)

तकनीकी बुलेटिन संख्याः 63

बेर

उन्नत बागवानी

हरे कृष्ण
पी. एल. सरोज

भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
बीकानेर – 334 006 (राजस्थान)

शोधित उद्धरण

हरे कृष्ण एवं पी.एल. सरोज. 2018. बेर की उन्नत बागवानी. सी.आई.ए. एच./तकनीकी/प्रकाशन सं. 63, पृष्ठ 26, भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान

वर्ष

2018

प्रकाशन

प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज
निदेशक
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीछवाल, बीकानेर–334 006 (राजस्थान)

मुद्रण

मैसर्स रॉयल ऑफसेट प्रिन्टर्स, ए–89/1,
नारायणा इण्डस्ट्रियल एरिया फेस–1,
नई दिल्ली–110028

आमुख

शुष्क क्षेत्रों में मृदा और पर्यावरणीय परिस्थितियां दोनों ही अति विषम होती हैं। ऐसे पर्यावरणीय परिस्थितियों में जहां अन्य फसलें ठीक से नहीं उग पाती वहीं बेर की बागवानी से कम लागत में अधिक आमदनी ली जा सकती है। बेर पोषक तत्वों, प्रतिआक्सीकारक तत्वों एवं औषधि गुणों से भरपूर बहुत ही उपयोगी फल है। किन्तु, उपयुक्त किस्मों, प्रवर्धन तकनीक, सही छत्रक प्रबंधन, पोषक तत्व और पानी का उचित बजटीकरण, नमी संरक्षण पद्धति, पौधों के आसपास सूक्ष्म जलवायु के निर्माण इत्यादि के बारे में ज्ञान की कमी के कारण बेर की खेती को वांछित प्रसार नहीं मिल रहा है। इसका प्रमुख कारण यह हो सकता है कि बेर को एक अवप्रयोगी फसल ही समझा जाता रहा है और इसकी खेती विशेष रूप से ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों तक ही सीमित रही है। जबकि, इसके फल स्वयं के स्वाद और पोषक–मूल्य में अद्वितीय हैं और किसी भी अन्य फल से किसी भी प्रकार से कम नहीं है। इसके अतिरिक्त, अगर इसका ठीक ढंग से उपयोग किया जाए तो यह ग्रामीण या पिछड़े क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था को बदलने की अपरिमित संभावना रखता है क्योंकि इसके उत्पाद पोषण, औषधीय, स्वाद और आर्थिक महत्व के साथ पारंपरिक जीवन शैली का अभिन्न अंग हैं। अतः यह आवश्यक है कि बेर को स्वास्थ्य प्रचार एवं प्रसार अभियानों में सम्मिलित किया जाए। यह समय की मांग है कि बागवानी के इस महत्वपूर्ण और आर्थिक रूप से लाभकारी क्षेत्र पर ध्यान केंद्रित किया जाए ताकि ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ किया जा सके।

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान अपने स्थापना के समय से ही मरुस्थलीय फलों में शोध द्वारा बागवानी के विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिए निरंतर प्रयत्नशील है। यह संस्थान शुष्क फलों के लिए एक राष्ट्रीय सक्रिय जर्मप्लाज्म स्थल है, जिसमें देश का सबसे बड़ा बेर का जर्मप्लाज्म पूल भी सम्मिलित है। संस्थान में बेर के रूपात्मक और जैवरासायनिक तकनीकों से अभिलक्षणन, प्रवर्धन तकनीकों का मानकीकरण, काट–छांट एवं सधाई की विधियों का मानकीकरण, व्याधि एवं कीट प्रबंधन इत्यादि पर अनुसंधान कार्य किया गया है। बेर की उन्नत बागवानी के तकनीकों के संदर्भ में बढ़ते ज्ञान को ध्यान में रखते हुए, जन मानस, विशेषकर बागवानों को इन वैज्ञानिक पद्धतियों तथा बेर की बागवानी से जुड़े संभावनाओं और समस्याओं से निपटने के तरीकों से अवगत कराने के लिए इस तकनीकी बुलेटिन को प्रकाशित करने की आवश्यकता समझी गई। इस बुलेटिन में बेर की वैज्ञानिक बागवानी के बारे में जानकारियाँ सम्मिलित हैं। पाठकों की सुगमता के लिए बुलेटिन में पर्याप्त संख्या में चित्रों और तालिकाओं की मदद से पोषक मूल्य, प्रजातिगत विविधताओं, प्रवर्धन तकनीक, उत्पादन तकनीक, जल, पोषण, व्याधि एवं कीट प्रबंधन के बारे में आवश्यक विवरण दिए गए हैं। आशा है कि यह संकलन पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। इस तकनीकी बुलेटिन को तैयार करने में योगदान करने वालों का लेखकगण हृदय से आभार प्रकट करते हैं।

(लेखकगण)

स्थानः बीकानेर
दिनांकः 09 मई, 2018

अनुक्रमणिका

क्रम संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1.	परिचय	1
2.	फल संगठक, पोषकमान एवं उपयोग	1
3.	उत्पत्ति, इतिहास एवं वर्तमान परिदृश्य	3
4.	प्रचलित उत्पादन प्रणाली में कमियाँ	3
5.	प्रजाति चयन	4
6.	कृषक अधिकार के परिप्रेक्ष्य में डी.यू.एस. परीक्षण	7
7.	पादप प्रवर्धन	9
8.	रोपण	13
9.	सधाई एवं कटाई–छंटाई	14
10.	पोषक तत्व प्रबंधन	15
11.	जल प्रबंधन	16
12.	तुड़ाई, उपज और विपणन	18
13.	मूल्य संवर्धित उत्पाद	20
14.	आश्रय पट्टी	21
15.	बहुफसली खेती प्रणाली	21
16.	रोग प्रबंधन	22
17.	कीट प्रबंधन	23
18.	दैहिक विकार	25
19.	आय–व्यय का विवरण	26

परिचय

शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में पर्यावरणीय परिस्थितियां अति विषम होती हैं उदाहरणस्वरूप कम और अनियमित वर्षा, उच्च वाष्पीकरण और चरम तापमान, मृदा की कम जल धारण क्षमता एवं ऊर्वरा शक्ति, सिंचाई के सीमित संसाधन इत्यादि। ऐसे पर्यावरणीय परिस्थितियों में, सस्य फसलों की उत्पादकता संतोषजनक स्तर से कम होती है, जिससे इन क्षेत्रों में सस्य फसलों की खेती को एक लाभहीन उद्यम माना जाता है। संवेदनशील पर्यावरणीय परिस्थितियों में फल वृक्षों की सफल एवं व्यावसायिक खेती की संभावनाओ से न केवल इन क्षेत्रों के मूल निवासियों, विशेष रूप से छोटे किसानों, को आर्थिक स्थिरता मिलेगी अपितु, फल उत्पादन के अंतर्गत नए क्षेत्रों को लाने का दायरा भी बढ़ेगा।

बेर *(जीजिफस मौरिशियाना)* या भारतीय जूजूबे, जो वानस्पतिक कुल रैमनेसी से संबंधित है, भारतीय मूल की एक फलीय फसल है तथा यह शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्र का एक लोकप्रिय फल है। बेर के पौधे अपने आपको विपरीत परिस्थितियों में ढालने की अदभुत क्षमता रखते हैं। शुष्क एंव अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में जहां वार्षिक वर्षा कम अथवा अनियमित होती हैं तथा तापमान भी अधिक होता है, वहां बेर सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसकी बागवानी से कम लागत में अधिक आमदनी ली जा सकती है। भारत में बेर पारंपरिक रूप से प्राचीन काल से (लगभग 4000 सालों से) उगाया जाता रहा है। यह शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के लिए सबसे उपयुक्त फल वृक्षों में से एक है। इसे 'शुष्क फलों का राजा', चीनी खजूर, चीनी अंजीर या 'गरीब आदमी के फल' के रूप में भी जाना जाता है। हालांकि बेर की उन्नत किस्में अन्य कई फलों से ऊँचे दामों पर बिकती है, अतः इस अवस्था में बेर को गरीबों का फल कहना तर्कसंगत नहीं होगा। बेर सीमांत परिस्थितियों में भी कम लागत पर अच्छी गुणवत्ता की पैदावार करता है। यह शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों हेतु बहुत ही उपयुक्त फल है, क्योंकि जहां अन्य फल ऐसी दशा में ठीक से नहीं उग पाते वहीं बेर अच्छे तरह से फलोत्पादन कर सकता है क्योंकि इसे मई व जून के महीनों में अन्य फलों की अपेक्षा कम से कम पानी की आवश्यकता होती है। भारत के थार रेगिस्तान (पश्चिम राजस्थान) की कठोर परिस्थितियों में बेर की सफल खेती, रेगिस्तान की स्थितियों के प्रति इसके अनुकूलन को दर्शाती है। बेर में फूल और फलन का समय मानसून (जुलाई–सितम्बर) के दौरान होता है, जिस समय बारिश के पानी की अधिकतम उपलब्धता होती है। बेर में लम्बी मूसला जड़ होती है, जोकि भूमि में अत्यधिक गहराइयों से भी जल लेने की क्षमता रखती हैं। शुष्क गर्मी (अप्रैल–जून) के दौरान, यह पत्तियों को गिराकर निष्क्रिय अवस्था में चला जाता है, जिससे यह सूखे की चपेट में आने से बच जाता है। इस प्रकार बेर उन क्षेत्रों में भी फल का उत्पादन कर सकता है जहां औसत वार्षिक वर्षा 150–200 मिलीमीटर है। सही मायनों में, बेर थार रेगिस्तान के निवासियों के लिए 'रेगिस्तानी सेब' है। बेर आसानी से प्रवर्धित हो जाता है और आवर्तक सूखा अनुभव करने वाले क्षेत्रों में विषम परिस्थितियों को सहने की क्षमता रखता है। इस प्रकार बेर, गर्म मरूस्थलीय पर्यावरण में, कृषि वानिकी प्रणाली के अंगीकरण के लिए एक उपयुक्त एवं महत्वपूर्ण वृक्ष है। बेर इन क्षेत्रों को आर्थिक रूप से जीविका प्रदान कर सकता है और साथ ही साथ पारिस्थितिकीय असंतुलन को बढ़ने से भी रोकेगा।

फल संगठक, पोषकमान एवं उपयोग

सामान्यतया बेर को एक अवप्रयोगी फल मानकर इसके पोषकमान को नजरअंदाज कर दिया जाता है, परंतु, बेर के पोषकमान के बारे में बहुत ही कम लोग जानते होगें कि यह पोषक तत्वों से भरपूर बहुत ही उपयोगी फल है, जिसमें कई महत्त्वपूर्ण पौष्टिक तत्व जैसे विटामिन, खनिज लवण, अम्ल, शर्करा इत्यादि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। पौष्टिक गुणों की दृष्टि से बेर फल हिमालय के सेव फल से कम नहीं है। हालांकि फलों का संघटन

एवं पोषकमान प्रजाति विशेष पर निर्भर करता है परन्तु औसतन फल में 81–97 प्रतिशत तक गूदा होता है। परिपक्व फल में 13–24 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस एवं 160 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम विटामिन सी (एस्कोर्बिक अम्ल) होता है। लोकप्रिय बेर प्रजाति गोला में 80–82 प्रतिशत नमी, 12.5 प्रतिशत शर्करा, 17–19 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस और 0.20–0.80 प्रतिशत अम्लता होती है। बेर के फल आँवला व अमरूद के बाद विटामिन सी के तीसरे सबसे बड़े स्रोत माने जाते हैं। इनमें सेब व नींबू वर्गीय फलों से भी कहीं अधिक विटामिन 'सी' होता है। बेर के फल विटामिन 'ए' (बीटा–कैरोटीन) का भी अच्छा स्रोत है (31 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम)। फलों में लगभग 14 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट पाए जाते हैं। वैसे तो बेर में कई शर्कराऐं भी पाई जाती हैं परन्तु सुक्रोज (5.6 प्रतिशत), फ्रक्टोस (2.08 प्रतिशत) और ग्लूकोज (1.54 प्रतिशत) आदि बेर के फलों में पाई जाने वाली प्रमुख शर्कराएँ हैं। बेर के फल प्रोटीन व पोषक तत्वों (कैल्सियम, फॉस्फोरस व लौह तत्व) के भी अच्छे स्रोत माने जाते हैं।

बेर के फल प्रति ऑक्सीकारक तत्वों से भी भरपूर होते हैं। प्रति ऑक्सीकारक तत्व ऐसे पदार्थ होते हैं जो शरीर में विद्यमान क्रियाशील आक्सीजन द्वारा शरीर के ऊतकों को होने वाले ऑक्सीकरण क्षति को रोकते या कम करते हैं। यदि यह क्षति किसी कारण से शरीर में रूक नहीं पाती है तो यह शारीरिक कोशिकाओं को हानि पहुंचाकर विभिन्न रोगों को बढ़ावा दे सकता है। संस्थान के जननद्रव्य प्रक्षेत्र में उपलब्ध 28 किस्मों पर किए गए शोध से ज्ञात होता है कि विटामिन सी, कुल फिनॉल, कुल फ्लवोनोईड्स तथा कुल प्रतिऑक्सीकारक क्षमता विभिन्न किस्मों में क्रमशः, 48–160 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम, 49–196 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम, 60–173 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम एवं 2.9–6.3 माइक्रोमोल ट्रोलोक्स समतुल्य प्रति ग्राम तक पाया गया है। बेर की किस्म जेड जी–3 में कुल प्रति ऑक्सीकारक क्षमता सर्वाधिक पायी गयी है। अतः बेर ऐसा फल है जिसके उपयोग से न केवल जरूरी विटामिन/पोषक तत्व मिलते हैं, अपितु इसका नियमित उपयोग शरीर को बीमारियों से लड़ने की भी क्षमता प्रदान करता है।

इसके अलावा बेर पौधे के विभिन्न भाग औषधि के रूप में भी प्रयोग किए जाते हैं जैसे छाल, जड़ और पत्तियां। बेर की जड़ को बुखार, घाव व नासूर तथा छाल को अतिसार के उपचार में लाया जाता है। जड़ों तथा छाल में जिजीबेरानालिक नामक एक विशिष्ट पेन्टासाइक्लिक ट्राईटरपेनायड पाया जाता है। ताजे शोधों से पता चला है कि बेर के फलों में पाये जाने वाले चयापचयों तत्वों जैसे उर्सोलिक अम्ल, ओलेयनोलिक अम्ल और बेटुलिनिक अम्ल में कैंसर जैसे व्याधि से भी लड़ने की क्षमता है। बेर के फलों का उपयोग ताजे फलो के रूप में खाने तथा प्रसंस्कृत उत्पादों जैसे सुखाकर छुआरों के रूप में, शर्बत, जैम, मुरब्बा, पेठा, स्क्वैश, चटनी एवं अचार बनाने में किया जाता है। निर्जलित फलों को लंबे समय तक रखा जा सकता है और वे बेमौसम में प्रयोग में लाये जा सकते हैं। पके हुये फल शीतलन प्रभाव के लिए जाने जाते हैं साथ ही यह रेचक, जलन और प्यास को कम करने वाले तथा रक्त की अशुद्धियों को दूर करने वाले हैं। जबकि सूखे फल, रेचक और क्षुधावर्धक हैं। इसकी पत्तियां (पाला) पशुओं के लिए पौष्टिक चारे के रूप में भी प्रयोग लाई जाती है तथा गुठलियों को मुर्गी पालन में सहायक पोषक पदार्थ के रूप में प्रयोग में लाया जा रहा है। बेर की ही एक अन्य प्रजाति *जीजिफस जाइलोपायरस*, लाख कीट (*टकार्डिया लक्का*) के पालन के लिए एक आश्रयी पौधा है। पेड़ों की कटाई–छँटाई से प्राप्त लकड़ी का उपयोग ईंधन के रूप में अथवा खेतों की बाड़ बनाने में किया जाता है। बेर सरकारी और अन्य शोध संगठनों जैसे भारतीय आनुवंशिकी संसाधन कार्यक्रम और अवप्रयोगी फसलों के लिए अंतर्राष्ट्रीय केंद्र, साउथहैंप्टन विश्वविद्यालय, ब्रिटेन द्वारा आगे शोध के योग्य एक अवप्रयोगी प्रजातियों के रूप में मान्यता प्राप्त है। उपरोक्त लाभों के कारण, विविध उपयोगों तथा मूल्य–वृद्धि द्वारा बेर फलों के समुचित दोहन से शुष्क क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।

उत्पत्ति, इतिहास एवं वर्तमान परिदृश्य

उपलब्ध साहित्य से पता चलता है कि भारत से लेकर दक्षिण–पश्चिमी चीन एवं मलेशिया तक फैले क्षेत्र में बेर की उत्पत्ति हुई होगी। यह लगभग 1000 ईसा पूर्व से मानव द्वारा उपयोग में लिया जा रहा था और वर्तमान में बेर उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों (अफ्रीका, मध्य और दक्षिण अमेरिका और वेस्ट इंडीज) तथा भूमध्य क्षेत्र में प्रशांत द्वीप समूह में प्राकृतिक रूप से फैला हुआ है। दक्षिण–पूर्व एशिया में, यह ज्यादातर थाईलैंड में पाया जाता है। परंतु, यह केवल भारत और चीन में ही वाणिज्यिक रूप से महत्वपूर्ण है। यह अपने व्यापक अनुकूलन, आसान प्रबंधन, कम समय में फलन, खाद्य और भोजन के रूप में उपयोग, और अन्य कई उपयोगों के लिए शीघ्रता से महत्वपूर्ण होता जा रहा है। चीनी बेर और भारतीय बेर को 20 लाख हेक्टेयर के कुल क्षेत्र में 60 लाख टन से अधिक के वार्षिक उत्पादन के साथ उगाया जा रहा है। लगभग 3 करोड़ किसान अपनी आजीविका के लिए बेर उत्पादन पर निर्भर हैं। बेर दुनिया भर में भारतीय उपमहाद्वीप सहित दक्षिण पूर्व एशिया, ऑस्ट्रेलिया, चीन, अफ्रीका, भूमध्य क्षेत्र और अमेरिका तक फैला हुआ है, लेकिन इसकी खेती दुनिया के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में ही सीमित है और मुख्य रूप से खेती भारत और चीन में की जाती है। चीन के बाद दुनिया के देशों में भारत दूसरे स्थान पर है।

भारत में बेर की खेती प्रमुख रूप से महाराष्ट्र, गुजरात, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, पंजाब, कर्नाटक, बिहार, छत्तीसगढ़ और आंध्र प्रदेश में की जाती है। पंजाब में संगरूर, भटिंडा, फिरोजपुर, लुधियाना, पटियाला और मुक्तसर जिले कलमी बेर के लिए सबसे प्रसिद्ध हैं। हरियाणा में हिसार, रोहतक, जिंद, पानीपत, महेंद्रगढ़ और गुड़गांव जिले बेर की व्यावसायिक खेती के लिए प्रसिद्ध हैं। उत्तर प्रदेश में वाराणसी, अलीगढ़, फैजाबाद और आगरा में बेर के बगीचे पाएं जाते हैं। राजस्थान में बेर के बगीचे भरतपुर, जयपुर, चुरू, बीकानेर, अजमेर और जोधपुर के आसपास फैले हुए हैं। गुजरात में, बनासकांठा, साबरमती, भावनगर, सुरेंद्रनगर, पाटन, अहमदाबाद, भरूच, वडोदरा, साबरकांठा, पंचमहल और मेहसाणा के आसपास बेर के बगीचे पाए जाते हैं। दक्षिण भारत में, तमिलनाडु के तिरुनलवेली, रामनाथपुरम, धर्मपुरी और सेलम जिलों में और कर्नाटक में बीजापुर, बेल्लारी, गुलबर्गा, बेलगाम, रायचूर, बिदार के आसपास बेर की खेती की जाती है। पश्चिम बंगाल में मुर्शिदाबाद, मालदा, बांकुरा और बीरभूम के जिलों में यह फल काफी लोकप्रिय है। वर्ष 2016–17 के अनुमानित आंकड़ों के अनुसार, भारत में बेर का वार्षिक उत्पादन 50,000 हेक्टेयर से 5,26,000 मीट्रिक टन होने का अनुमान है।

प्रचलित उत्पादन विधि में कमियाँ

उपयुक्त किस्मों, प्रवर्धन तकनीक, पोषक तत्व और पानी का उचित बजटीकरण, नमी संरक्षण पद्धति, पौधों के आसपास सूक्ष्म जलवायु के निर्माण इत्यादि के बारे में ज्ञान की कमी के कारण बेर की खेती को वांछित प्रसार नहीं मिल रहा है। इसका प्रमुख कारण यह हो सकता है कि बेर को एक अवप्रयोगी फसल ही समझा जाता रहा है और इसकी खेती विशेष रूप से ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों तक ही सीमित रही है। जबकि इसके फल स्वयं के स्वाद और पोषक–मूल्य में अद्वितीय हैं और किसी भी अन्य फल से किसी भी प्रकार से कम नहीं है। बेर की खेती एवं प्रसार में आने वाले प्रमुख नियामक निम्नवत प्रकार से हैं।

- बेर को 'गरीबों का फल' समझना और उसकी खेती के लिए अनुपयुक्त भूमि का चुनाव तथा वैज्ञानिक विधि से उत्पादन न करना।
- कृषकों में क्षेत्र के अनुसार, उत्पादन समय, उत्पादकता, गुणवत्ता एवं कीड़े–बीमारियों के सहनशीलता वाली प्रजातियों के बारे में जानकारी की कमी।
- बेर के वानस्पतिक प्रवर्धन एवं गुणवत्तायुक्त मानक पौधों के बारे में जानकारी की कमी।

- बेर की बागवानी में पोषण के बारे में ध्यान न देना या असंतुलित पोषण करना।
- बेर की अच्छी फलत के लिए जल प्रबंध अत्यंत आवश्यक है, विशेषकर फलत के समय, किन्तु बागवान बेर में जल प्रबंध को समान्यतया ध्यान नहीं देता है।
- बेर की खेती, विशेषकर शुष्क क्षेत्रों में सूक्ष्म जलवायु निर्माण का विशेष महत्व है, जिसका फलत पर सीधा प्रभाव पड़ता है किन्तु कृषक इस बारे में जानकारी के अभाव में ध्यान नहीं दे पाते हैं।
- बेर में उचित छत्रक प्रबंध एवं समय पर समेकित विधि से कीड़े–बीमारियों की रोकथाम पर भी कम ध्यान दिया जाता है।
- बेर के साथ यदि अन्य फसलों की खेती करनी है तो उसकी विधि अलग तरह की होती है। उसके बारे में भी कृषकों को कम जानकारी है।
- बेर की बागवानी से अधिक आय के लिए बेर के फलों को विपणन से पूर्व उनकी उचित ग्रेडिंग/ श्रेणीकरण, पैकिंग, भंडारण एवं बाजार तक ताजी दशा में पहुंचाने के बारे में जानकारी का अभाव।
- बेर के फलों से विभिन्न उत्पाद भी बनाए जाते हैं, उसके बारे में भी उत्पादकों का ध्यान न देना या उनमें ज्ञान की कमी आदि।

शुष्क क्षेत्र में खेती के उन्नत उपाय

प्रजाति चयन

पौधे और फल के गुणों के दृष्टिकोण से बेर में व्यापक विविधता मौजूद हैं। भारत में, 150 से अधिक किस्मों को सूचीबद्ध किया गया है, लेकिन केवल कुछ प्रजातियाँ ही वाणिज्यिक रूप से महत्वपूर्ण हैं। गुणवत्तायुक्त फलोत्पादन हेतु उन्नत प्रजातियों का चयन करके लगाया जाना नितान्त आवश्यक है। राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में अगेती फसल के लिये गोला एंव मुंडिया मध्यम फसल के लिए थार सेविका, थार भुभराज, सेब, बनारसी कड़ाका, कैथली, जोगिया एंव पछेती फसल हेतु उमरान, इलायची, माहरवाली, थार मालती आदि उन्नत किस्म के पौधे लगाए जाने चाहिए।

बनारसी कड़ाका : वृक्ष लंबा, ओजस्वी, पत्ता हरे, अंडाकार, फल अंडाकार एवं आकार 5.2×3.0 सेन्टीमीटर। फल हरा–पीला तथा गूदा सफेद और मीठा होता है। फलों में कुल घुलनशील ठोस लगभग 17 प्रतिशत, खटास 0.15 प्रतिशत, विटामिन 'सी' 128 मि.ग्रा./100 ग्राम गूदा, औसत पैदावार 125 किग्रा. प्रति पेड़ होता है।

सेब : इस किस्म के फल वजन में लगभग 25 ग्राम के तथा आकार में सेब के तरह ही होते हैं और गूदे में 17.5° ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस होता है। परिपक्व होने के बाद भी इसके फल का सतह थोड़ा हरा पीला रहता है। वर्षा आधारित खेती के तहत उपज 40–50 किलोग्राम प्रति पौधा होता है जबकि सिंचित क्षेत्रों में उपज गोला किस्म के समतुल्य होता है।

छुहारा : इस किस्म की शाखाएँ फैली होती हैं तथा पेड़ की वृद्धि प्रकृति अर्ध–सीधा होता है। फल का आकार छुहारे की तरह लंबाकार होता है और वजन 25–30 ग्राम तक होता है। पकने पर फलों का रंग हल्का पीला होता है एवं कुल घुलनशील ठोस 22 प्रतिशत होता है।

गोला : पेड़ की वृद्धि प्रकृति फैलाव लिए होती है तथा पत्तियां चौड़े एवं हृदयाकार होते हैं। फल लगभग गोलाकार होता है, जिनका निचला सिरा कुछ चपटा होता है। फलों में कुल घुलनशील ठोस लगभग 17–18 प्रतिशत तक होता है। यह उत्तरी भारत की एक प्रमुख प्रजाति है।

उमरान : यह किस्म ज्यादा उत्पादन के लिए जाना जाता है। फल बड़ा, अंडाकार, जिनका निचला सिरा गोल होता है। फल का वजन 30–40 ग्राम, त्वचा मोटी और कठोर एवं मध्यम रसीला, गूदा 96 प्रतिशत तथा औसत उत्पादन 150–200 किलोग्राम प्रति वृक्ष है। औसतन कुल घुलनशील ठोस 17.5–19.0 प्रतिशत तक होता है। इसके फलों की भंडारण क्षमता उत्तम मानी जाती है।

गोमा कीर्ति : इस प्रजाति का चुनाव उमरान किस्म से ही किया गया है। इस किस्म का विकास के.शु.बा.सं., बीकानेर के गोधरा (गुजरात) स्थित क्षेत्रीय केंद्र के.बा.प.के. द्वारा किया गया है। उमरान किस्म की तुलना में यह किस्म एक सप्ताह पहले पकती है। इसके फलों के भंडारण गुणवत्ता अच्छी होती है। यह दूरस्थ बाजारों में भी अच्छी कीमत प्राप्त करता है। इसमें फल मक्खी और फल छेदक कीटों द्वारा संक्रमण कम होता है।

इलाइची : पेड़ फैलाव लिए होता है। फल नारंगी की तरह दोनों सिरों पर चपटे होते हैं। पकने पर, फलों का सुवास इलाइची की तरह होने के कारण इस किस्म को इलाइची नाम से जाना जाता है। गूदा मुलायम होता है। पकने पर फलों का रंग हल्का पीला होता है एवं कुल घुलनशील ठोस लगभग 20 प्रतिशत होता हैं तथा विटामिन सी की मात्रा अच्छी होती है।

जोगिया : इस किस्म के पेड़ फैलाव लिए होता है तथा फल अंडाकार होता है। गूदा मुलायम और रसीला होता है, जिनमें कुल घुलनशील ठोस लगभग 16 प्रतिशत होता है। फलों की भंडारण क्षमता बहुत कम होती है।

कैथली : इसके पेड़ सीधे तथा पत्तियाँ थोड़ी मुड़ी होती हैं। यह मध्यम–देरी से पकने वाली किस्म है। फल अंडाकार एवं मुलायम होते हैं। गूदा भी मुलायम होता है। पकने पर फलों का रंग हल्का पीला होता है एवं कुल घुलनशील ठोस लगभग 15–16 प्रतिशत होता है।

मेहरून : यह किस्म गुजरात और महाराष्ट्र की एक लोकप्रिय प्रजाति है। इसमे प्रचुर मात्रा में फल लगते हैं परंतु फलों का आकार छोटा, अंडाकार, पीले या हल्के भूरे रंग के होता है। फल स्वाद में मीठा होता है तथा औसत गूदे का प्रतिशत 87.3 है। बीज आकार में बड़ा होता है और यह फल के वजन का 13 प्रतिशत तक होता है। यह फल मक्खी से प्रतिरोधी प्रजाति है।

सनौर 5 : यह एक बीजू पौधे से चयन है। फल की त्वचा पीले रंग की होती है तथा गूदे में कुल घुलनशील ठोस 20–21 प्रतिशत तक होता है। यह फल मार्च के दूसरी पखवाड़े में पकता है और प्रति पेड़ 150 से 200 किलोग्राम फल पैदा होता है।

जेड जी–3 : पेड़ फैलाव लिए होता है। फल अंडाकार होते हैं और फलों का आकार 4×3 सेन्टीमीटर होता है।

मुंडिया : इसके वृक्ष अर्ध–सीधे होते है। यह लगभग 40 ग्राम वजन वाले घंटी के आकार का मुलायम गूदा वाला फल देता है, जिसमें कुल घुलनशील ठोस 200 ब्रिक्स होता है। सिंचित स्थितियों में औसत फल उपज लगभग 100–120 किलोग्राम प्रति पेड़ होता है।

नाजुक : यह भी शीघ्र तैयार होने वाली किस्म है। इसके फल मध्यम से छोटे आकार के चपटे एवं आयतरूपी होते हैं। फलों का सिरा नुकीला होता है। फलों का रंग सुनहरा, फिर भूरा और अंत में पीला होता है। गूदा हल्के क्रीम रंग का तथा मध्यम मुलायम होता है। फलों में कुल घुलनशील ठोस लगभग 18 प्रतिशत तक होता है।

नरेंद्र बेर–1 : इस प्रजाति के पेड़ फैलाव लिए होते हैं तथा भारी उपज देते हैं। फल पीले हरे रंग के गोल अथवा लंबाकार होते हैं।

नरेंद्र बेर–2 : इस प्रजाति के पेड़ मध्यम ऊंचाई वाले तथा अर्ध–सीधे होते हैं। परिपक्व अवस्था पर फलों का आकार प्रतिअंडाकार तथा रंग पीला–हरा होता है।

थार भुभराज : इसका विकास के.शु.बा.सं. द्वारा राजस्थान के भुसावर क्षेत्र (भरतपुर जिले के पास) के स्थानीय बेर के पौधों से चयन द्वारा किया गया है। फल का औसत वजन 27 ग्राम, कुल घुलनशील ठोस 23 प्रतिशत है और एस्कॉर्बिक एसिड 60 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम फल है।

थार सेविका : यह किस्म सेब और काठा प्रजाति के संकरण द्वारा विकसित किया गया है। फलों का औसत

वजन लगभग 25 ग्राम, कुल घुलनशील ठोस 22–24 प्रतिशत, एस्कॉर्बिक अम्ल 88 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम फल होता है। यह अगेती किस्म है।

थार मालती : के.शु.बा.सं. द्वारा हाल ही में बीजू पौधे से चयन के द्वारा यह किस्म चिन्हित की गयी है। यह अर्ध –सीधी, कम कांटेदार और शुष्क क्षेत्र में उच्च उपज (65–70 किलोग्राम प्रति पेड़) वाली किस्म है। ये विशेषतायें वांछनीय लक्षण हैं क्योंकि वे फलों के तुड़ाई में सहयोगी सिद्ध होते हैं। यह एक पछेती किस्म है परंतु वाणिज्यिक किस्म उमरान के विपरीत, इसमें गूदा मुलायम होता है जो कि एक वांछनीय विशेषता है। इसके अलावा, यहां तक कि थोड़े कच्चे फल का गूदा भी नरम होता है।

मुंडिया

कैथली

गोला

सेव

बनारसी पैबंदी

इलाइची

थार सेविका

थार मालती

बेर की विभिन्न किस्में

एपल बेर

एपल बेर को 'थाई बेर' या 'ताइवान बेर' के रूप में भी जाना जाता है क्योंकि यह ताइवान में जापान के कब्जे के समय से ही उगाया जा रहा है और दुनिया के अन्य हिस्सों में शायद थाईलैंड से फैला है। भारत में यह देश के नर्सरीवालों के माध्यम से ताइवान, थाईलैंड और बांग्लादेश से लाया गया है। इसके अलावा, तेलंगाना के उत्पादकों के बीच यह तेलंगाना सेब के रूप में लोकप्रिय है। 'एपल' शब्द का प्रयोग हरे सेब के साथ इसकी समानता को दर्शाता है। 'एपल बेर' की अच्छी प्रतिष्ठा

मुख्य रूप से इसके बड़े फल आकार की वजह से है। इसके पौधों में कोई कांटें नहीं होते है, जिससे अंतर–सस्य क्रियाओं के संचालन में सुविधा रहती है।

मध्यम वर्ग के किसानों के बीच एपल बेर तेजी से लोकप्रिय होता जा रहा है। एपल बेर की खेती बहुत तेजी से, विशेष रूप से गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों में बढ़ रही है। इसकी खेती उष्णकटिबंधीय, उपोष्णकटिबंधीय और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों से लेकर पूरे भारत के शुष्क जलवायु क्षेत्रों में समुद्र तल से 1000 मीटर की ऊँचाई तक की जा सकती है। इसकी खेती के लिए अधिकतम मृदा पीएच मान 6.0–7.5 के बीच होना चाहिए।

इस किस्म को जून के महीने में 70–80 प्रतिशत सफलता के साथ पैबंदी अथवा टी कलिकायन विधि द्वारा सफलतापूर्वक प्रवर्धित किया जा सकता है। मानसून के दौरान पौध–रोपण श्रेयस्कर होता है। इस प्रजाति के चार सौ पौधों को प्रति हेक्टेयर में समायोजित किया जा सकता है। यह रोपण के छह–नौ महीने में फूलने लगती है। पुष्पन सितंबर माह से शुरू होता है और जनवरी के दौरान फल पक कर तैयार हो जाते हैं। दूसरे वर्ष से, 8–12 किलोग्राम प्रति वृक्ष की पैदावार लिया सकता है। एक पूर्ण विकसित वयस्क पेड़ 50–90 किलोग्राम प्रति पेड़ उत्पादन दे सकता है। वर्षा आधारित कृषि क्षेत्रों में, एकल फल का वजन लगभग 60–120 ग्राम का होता है। फलों का आकार बड़ा होने के कारण तुड़ाई आसान हो जाता है। इस प्रजाति के 400 से अधिक वृक्ष की लगाकर किसानों को 3 से 4 लाख तक की कमाई प्रतिवर्ष होने की भी सूचनाएँ है। अन्य बेर किस्मों की तुलना में, एपल बेर की भंडारण क्षमता तुलनात्मक रूप से बेहतर होती है, इसलिए बाजार में इसके फलों के उच्च मूल्य प्राप्त होते हैं। वर्तमान में, एपल बेर के ताजे फलों को मालदीव और खाड़ी देशों जैसे बहरीन, सऊदी अरब और कुवैत में निर्यात किया जा रहा है।

के.शु.बा.सं., बीकानेर और इसके क्षेत्रीय केंद्र के.बा.प.के., गोधरा, दोनों स्थानों पर, एपल बेर की खेती के उन्नत तरीकों का मानकीकरण एवं मूल्यांकन किया जा रहा है ताकि शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के बागवानों को उचित संस्तुति किया जा सके।

कृषक अधिकार के परिप्रेक्ष्य में डी.यू.एस. परीक्षण

आनुवांशिक विविधता के ह्रास को रोकने तथा कृषि में सतत बढ़ोतरी बनाए रखने के लिए भारत सरकार द्वारा कई कदम उठाए गए है, जिनमें "पौधा किस्म और कृषक अधिकार सरंक्षण" अधिनियम–2001 एक ऐतिहासिक और महत्वपूर्ण कदम है। इस अधिनियम को वर्ष 2001 में भारतीय संसद द्वारा पारित किया गया था।

इस अधिनियम के अंतर्गत पादप प्रजनक एवं कृषकों द्वारा विकसित किस्मों के पंजीकृत कराने की भी व्यवस्था है ताकि उनके अधिकारों की रक्षा की जा सके, एवं विकसित प्रजाति के विपणन से होने वाले संभावित लाभ में उनकी साझेदारी सुनिश्चित की जा सके। इसी अधिनियम की अनुपालना हेतु, पौधा किस्म, प्रजनकों एवं कृषकों के अधिकार सरंक्षण के लिए कृषि मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा "पौधा किस्म और कृषक अधिकार सरंक्षण प्राधिकरण" का गठन किया गया है। इसके लिए संबंधित किस्म, जिसका पंजीकरण किया जाना है, की जांच कुछ मानकों के आधार पर की जाती है एवं उन्हीं संबंधित किस्मों को ही स्वीकार किया जाता है जो विशिष्ट (Distinct), एकरूप (Uniform) एवं स्थाई (Stable), जिसे संक्षेप में डी.यू.एस. (DUS) परीक्षण कहते है पर खरी उतरती हो। जाँच अथवा डी.यू.एस. परीक्षण मुख्यतः पादप प्रजनकों को अधिकार दिलाने लिए सक्षम प्राधिकरण द्वारा वृद्दिशील परीक्षणों अथवा प्राधिकरण की ओर से कार्य करते हुए सार्वजनिक अनुसंधान संस्था जैसे पृथक संस्थानों द्वारा या कुछ मामलों में प्रजनकों द्वारा किए गए वृद्दिशील परीक्षणों पर आधारित होता है।

इस परीक्षण के मापदण्ड, एक अनुभवी कार्यदल जिसमें विशेषज्ञ एवं कुशल परामर्शदाता होते है एवं जो कि पौधा किस्म और कृषक अधिकार सरंक्षण प्राधिकरण द्वारा गठित होता है, के द्वारा सुनिश्चित किए जाते है। प्रजनकों, बीज तथा पौधा उद्योग के अनुभव एवं ज्ञान को ध्यान में रखते हुए तथा गहन परामर्श एवं वार्ताओं के उपरांत उक्त सामान्य दिशा–निर्देशों का मसौदा तैयार किया जाता है। विभिन्न फसल किस्मों के संबंधित गुणों (जैसे पौधे की ऊँचाई, आकृति, बाह्य आकार, पत्ती का आकार, फलों एवं फूलों की आकृति, आकार एवं रंग तथा अन्य विशिष्ट गुण जिनके द्वारा संबंधित किस्म परीक्षण के मानदंडों को पूरा करती है) का उपयोग करते हुए, परीक्षण द्वारा संबंधित प्रजाति का विवरण (डेटाबेस) तैयार करते है तथा इसी आधार पर विकसित किस्म का पंजीकरण करते है। कृषक अपने द्वारा विकसित किस्मों का पंजीकरण के लिए प्रपत्र भरकर सीधे प्राधिकरण में आवेदन कर सकते है।

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर मे बेर के डी.यू.एस. परीक्षण के मापदण्डों को विकसित किया गया है, जिनके उपयोग से डी.यू.एस. परीक्षण के लिए प्रत्याशी किस्मों को समूहों में बांटा जाएगा ताकि विशिष्टता के मूल्यांकन में सुविधा हो। वे गुण जो अनुभव से ज्ञात होने पर भिन्न नहीं होते हैं या एक किस्म में बहुत थोड़े से भिन्न होते हैं और जो अपनी विभिन्न अवस्थाओं में संकलन में सभी किस्मों में पर्याप्त समान रूप से वितरित होते हैं, समूहीकरण की दृष्टि से उपयुक्त होते हैं।

बेर में 36 लक्षणों की पहचान की गई, जिनमें से 07 गुणों को समूहीकरण के लिए उपयोग में लिया जाना चाहिए। बेर की किस्मों के समूहीकरण के लिए निम्नलिखित गुणों का उपयोग किया जाना चाहिए:

बागवानी फसलों के विशिष्ट दिशा–निर्देशों एवं परीक्षण शुल्क संबंधित व्यापक दस्तावेजों को "पौधा किस्म एवं कृषक अधिकार सरंक्षण प्राधिकरण" की आधिकारिक वेबसाइट www.plantauthority.gov.in से प्राप्त किया जा सकता है। इन दस्तावेजों में डी.यू.एस. परीक्षण से जुड़े सभी पहलुओं से संबंधित विशिष्ट दिशा–निर्देशकों को भी उपलब्ध कराया गया है।

तालिका 1. बेर में समूह लक्षण

लक्षण	अवस्था	उदाहरण किस्में
बढ़वार स्वभाव	सीधा	तिकड़ी
	अर्ध–सीधा	छुहारा
	फैलावदार	गोला
पत्ती : आकृति	ओवेट	सफेदा रोहतक
	अंडाकार	गोला
	हृदयाकार	कैथली
	प्रतिअंडाकार	किसमिस
फल परिपक्व का समूह	अगेती	गोला
	मध्यम	सेब
	पछेती	मेहरून
परिपक्व फलः आकृति	लंबा	मेहरून
	अंडाकार	छुहारा
	ओवेट	जेड जी–3
	चपटा	इलायची

लक्षण	अवस्था	उदाहरण किस्में
	गोल	गोला
	अर्धचंद्राकार	नरमा
परिपक्व फलः रंग	पीला	गोला
	हल्का हरा–पीला	जेड जी–3
	चॉकलेटी भूरा	तिकड़ी
गूदे का गठन	मुलायम	छुहारा
	मध्यम	जेड जी–3
	सख्त	उमरान
गुठली की आकृति	लंबी	सेब
	गोल	गोला
	तकुआकार	सनौर–5
	मुगदराकार	छुहारा
	अर्धचंद्राकार	छुहारा बावल

पादप प्रवर्धन

मूलवृंत की तैयारी

भारत में बेर के अधिकांशतः पुराने बाग बीजू पौधों से तैयार किए गए हैं। ऐसे पेड़ों की पैदावार प्रायः कम तथा गुणवत्ता निम्न स्तर की होती हैं। अतः उन्नत किस्मों के कलमी पौधों के बाग लगाना ही अच्छा माना जाता है। बागवानों के मध्य, उन्नत किस्म के कलमी पौधों का प्रचलन धीरे–धीरे बढ़ रहा है। बोरडी *(जीजिफस रोटनडिफोलिया)* के बीज, जो आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं, आम तौर पर मूलवृंत के रूप में बेर के प्रवर्धन में प्रयोग में लाये जाते हैं। झड़बेर *(जीजिफस नुम्मुलरिया)* को भी मूलवृंत के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, परंतु, झड़बेर पर तैयार पौधें बहुत धीमी गति से बढ़तें हैं और बोरडी पर कलिकायन किए गए पौधों की तुलना में अधिक समयावधि में तैयार होते हैं। मूलवृन्तों को बोरडी के गुठलियों को तोड़कर निकाले गए बीजों की बुवाई द्वारा तैयार किया जाता है, जो लगभग एक सप्ताह में अंकुरित हो जातें है। गिरे हुए फलों के प्रयोग से बचना चाहिए, क्योंकि ऐसे फलों में बीजों की जीवन क्षमता केवल 30–50 प्रतिशत ही होती है। बीज गुठलियों की अंकुरण क्षमता को बढ़ाने के लिए उन्हें 48 घंटे पानी में भिगोकर या गंधक के अम्ल से 6 मिनट उपचार के बाद प्रयोग में लाया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, गुठलियों को नमक के 10–15 प्रतिशत घोल में डालकर अंकुरण क्षमता की जांच कर लेनी चाहिए। सतह पर तैरने वाली गुठलियां शक्तिहीन होती हैं, जिन्हें बोनें के लिए प्रयोग नहीं

क्यों करें? उन्नत किस्म (ज्यादा उत्पादन एवं अच्छी गुणवत्ता) के बाग लगाने के लिए.

कब करें? मार्च–अप्रैल में बोरडी (मूलवृन्त) के बीजों की बुवाई करें. पेंसिल की मोटाई वाली मूल्वृन्तों पर उन्नत किस्मों से कलिकायन मई–सितम्बर माह तक करें.

कैसे करें? उन्नत किस्मों की सांकुर को पैबंदी, टी (शील्ड), आई अथवा छल्ला कलिकायन विधि से मूलवृन्त पर भूमि से 15 सेमी की ऊंचाई पर कलिकायन करें.

क्या न करें? गिरे हुए फलों से मूलवृंत उगाने से बचें.

करना चाहिए। गुठलियों का ऊपरी कड़ा छिलका तोड़कर उनसे निकले बीजों (2–3 बीज प्रति गुठली) को बोने पर जमाव शीघ्र होता है और कालिकायन हेतु पौधे भी शीघ्र तैयार होते हैं। गुठलियों से बीज निकालने के लिए एक छोटे हथौड़े या पत्थर से उन्हे सावधानीपूर्वक तोड़ना चाहिए ताकि बीजों को कोई नुकसान न हो। बीजों को जिब्रेलिक अम्ल (500 पी.पी.एम.) में 24 घंटे तक भिगोकर उपचरित कर बोने से भी अंकुरण अच्छा होता है।

क्यारियों में मूलवृंत तैयार करने के लिए के लिये बीज की बुवाई क्यारियों में अप्रैल के प्रथम पखवाड़े तक कर दिया जाता है। बीज 30 सेंटीमीटर की दूरी पर कतारों में 5 सेंटीमीटर बीज से बीज की दूरी रखकर करते हैं। बीज की गहराई 2–3 सेंटीमीटर रखी जाती है। बुवाई के समय क्यारी में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक होता है। बुवाई के बाद क्यारी को घास–फूस की परत से ढककर फुहारे से आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहते हैं। बुवाई से लगभग 40 दिन पश्चात, कमजोर व सघन पौधों की छँटाई करके कतार में पौधों के आपस की दूरी लगभग 20 सेंटीमीटर रखी जाती है। समय–समय पर निराई–गुड़ाई व सिंचाई करते रहते हैं। इस तरह क्यारियों में तैयार किये गये पौधे 80–90 दिनों पश्चात लगभग पेंसिल के बराबर मोटाई (0.5 सेंटीमीटर) के हो जाते हैं जो कलिकायन के लिये उपयुक्त होते हैं।

पॉलीथीन की थैलियों में मूलवृंत तैयार करने के लिए 10x25 सेंटीमीटर आकार की 300 गेज की थैलियाँ (दोनों तरफ से खुले) प्रयुक्त की जाती हैं। मार्च–अप्रैल माह के दौरान बोरडी के गुठलियों से तुरंत निष्कर्षित बीजों को इन थैलियों में (2 बीज प्रति थैली), जिनमें पहले से ही गोबर की सड़ी खाद, रेत और मिट्टी का मिश्रण 1:1:1 के अनुपात में भरा होता है, 2 सेंटीमीटर गहराई में बोयी जाती हैं। इन थैलियों में 1 दिन के अंतराल पर नियमित रूप से पानी देना चाहिए। इनमें से लगभग एक–चौथाई पौधें जुलाई–अगस्त माह तक कलिकायन योग्य पेंसिल के आकार को प्राप्त कर लेती हैं, जबकि बाकी के पौधें आगामी अप्रैल माह तक तैयार हो जाते हैं। मूलवृन्तों को स्वस्थ और ओजस्वी होना चाहिए और इसे केवल एक ही तने के रूप में विकसित होने देना चाहिए।

सांकुर का चयन एवं आवश्यक तैयारी

पौध तैयार करने के लिए कलिका का चयन महत्वपूर्ण है। कलिकाओं को उन्नत किस्मों की सांकुर शाखाओं से लेते हैं। सांकुर टहनी का चयन प्रजाति के अनुरूप लगातार कई वर्षो से अच्छी फलत देने वाले वृक्ष से ही किया जाना चाहिए। सांकुर शाखाओं को सक्रिय वृद्धि के दौरान एकत्र किया जाना चाहिए (जून से मध्य सितम्बर)। इस समय चाकू से चीरा लगाने पर छाल आसानी से अलग हो जाता है। चयनित शाखा 2–3 माह पुरानी तथा स्वस्थ, हाल ही में परिपक्व हुई एवं फूली परंतु बिना खुली वानस्पतिक कलियों से युक्त होनी चाहिए। इस तरह की कलिकाएँ किशोर शाखाओं पर लगती हैं, जिन्हें ज्यादा संख्या में प्राप्त करने के लिए मातृ–वृक्ष को सुषुप्तावस्था में गहरी काट–छाँट देनी पड़ती है।

कालिकाएँ लेने के लिये इस प्रकार की शाखा को मातृ–वृक्ष से 15–20 सेंटीमीटर की लम्बाई तक काटकर अलग कर लिया जाता है। एक टहनी पर 5–6 स्वस्थ कलिकाएँ मिल जाती हैं। जून माह में आवश्यकतानुसार सांकुर शाखा प्राप्त करने हेतु अप्रैल में मातृ वृक्षों की गहरी छंटाई एवं तत्पश्चात सिंचाई कर देनी चाहिए क्योंकि कटाई–छंटाई विलम्ब से करने से समय पर परिपक्व सांकुर शाखाएं आवश्यक मात्रा में नहीं उपलब्ध हो पाती हैं। बेर में मध्य अगस्त से पुष्पन की शुरुआत हो जाती है। फूल आने के बाद कलिकायन हेतु कलिका सुगमतापूर्वक नहीं निकल पाती हैं। अतः, मध्य अप्रैल से 15 दिन के अतंराल पर कटाई–छंटाई करते रहने से आवश्यकतानुसार सांकुर शाखें प्राप्त होती रहेंगी। यदि कलिकायन के लिये सांकुर शाखों को दूर भेजना हो तो इन शाखों को नम स्फेगनम–मौस घास में लपेटकर पॉलीथीन की थैलियों में बंद कर के आसानी से भेजा जा सकता है। इस प्रकार की शाखाएं 2–3 दिन तक स्वस्थ दशा में बनी रहती हैं।

मूलवृंत पर कलिकायन

मूलवृंत पर सांकुर के कलिकायन हेतु पैबंदी, टी (ढाल), आई अथवा छल्ला कलिकायन विधि अपनायी जाती है। परंतु शुष्क क्षेत्रों में, सामान्यतः, पैबंदी विधि अपनायी जाती है। कलिकायन की प्रक्रिया उस समय प्रारम्भ करनी चाहिए जब मूलवृंत के तने की मोटाई पेंसिल जितनी हो जाए और मूलवृंत में रस का पर्याप्त प्रवाह हो रहा हो। कलिकायन का समय वैसे तो तापमान, वायुमंडलीय आर्द्रता कलिकाओं की उपलब्धता आदि पर निर्भर करता है, परन्तु उत्तरी भारत में मध्य जून से मध्य सितम्बर तक का समय इस कार्य हेतु उत्तम रहता है। सामान्यतया कलिकायन से पूर्व, मूलवृन्त को 15–20 सेंटीमीटर की ऊंचाई तक काट दिया जाता है और सभी पार्श्व शाखाओं और पत्तियों को भी अलग कर दिया जाता है। अधिक ऊँचाई पर कलिकायन से कलियों के फुटाव में कमी तथा अच्छा विकास नहीं होता है। पैबंदी विधि से कलिकायन हेतु, मूलवृंत पर उचित ऊँचाई पर आयताकार निशान (2.5–3.0 सेंटीमीटर लम्बा व तने की आधी मोटाई तक) तेज चाकू से लगाकर छिलके को आयत के आकार में निकाल दिया जाता है। प्रत्यारोपित प्रजाति की समान आकार वाले कालिका को सांकुर शाखा से सावधानीपूर्वक निकालकर मूलवृंत पर बनाये गये स्थान (आयताकार छाल निकाले हुये स्थान पर) पर अच्छी तरह बैठा दिया जाता है। टहनी पर यदि पत्तियाँ हो तो पत्तियों को इस तरह निकालें कि पत्ती की डंठल न टूटें। कलिका को बैठाने के बाद पॉलीथीन की पट्टी से कसकर बाँधा जाता है। बाँधते समय ध्यान रहे कि कालिका की आँख पर पॉलीथीन न लपेटें, जिससे आँख खुली रहे। चश्मा चढ़ाने के बाद मूलवृंत का ऊपरी कुछ हिस्सा काटकर निकाल दिया जाता है इससे कालिका के विकसित होने में सहायता मिलती है। जैसे ही कालिका का विकास शुरू हो जाय, जुड़ाव बिंदु के ऊपर से मूलवृंत का शेष भाग को भी पूरी तरह से काटकर निकाल दिया जाता है। प्रत्यारोपित कलिका जब 8–10 पत्तियों वाली टहनी बन जाय तो पौधे स्थानांतरण योग्य हो जाते है। कलिकायन की इस विधि से लगभग 90 प्रतिशत तक सफलता मिलती है। कलिकायन के बाद मूलवृंत पर जुड़ाव बिंदु से नीचे जितनी भी कलिकाएँ निकल रहीं हो, उन्हें समय–समय पर निकालते रहना चाहिए।

कलिकायन की विधि

शीर्ष रोपण विधि

झड़बेरी और बोरडी के पेड़ों या बेर के पुराने या घटिया किस्म के बागों को इस विधि द्वारा उत्तम किस्म के बागों में परिवर्तित कर सकते हैं। शीर्ष रोपण के लिये इन देशी वृक्षों की मुख्य शाखायें एक मीटर लम्बी रखकर पूरी तरह काट दी जाती है। शाखाओं की कटाई का कार्य अप्रैल–मई माह में करते हैं। कटाई के 15–20 दिन पश्चात मुख्य शाखाओं पर कई नई शाखाएँ निकलती हैं। प्रत्येक मुख्य शाखा पर एक स्वस्थ शाखा को रखकर शेष निकाल देते हैं। ये शाखाएँ जुलाई–अगस्त तक कलिकायन के लिए तैयार हो जाती है। इन शाखाओं पर इच्छित प्रजाति की सांकुर का कलिकायन किया जाता है।

परंतु बहुधा देखा गया है कि ऐसे देशी वृक्षों को भूमि के सतह से ठीक ऊपर काट देते हैं। ऐसा इसलिए करते हैं कि तेज हवाओं के कारण कलिकाओं से तैयार शाखाओं के टूटने संभावनाएं कम रहती हैं। अप्रैल–मई माह के दौरान कटे हुये भाग से कई शाखाएँ निकल आती हैं, जिनमें से 2–3 ओजस्वी शाखाओं का चयन कर लेते हैं। यह चुनी हुई शाखाएँ जब पेंसिल की मोटाई की हो जाती है, तो उनमें उन्नत किस्म को कलिकायन कर दिया जाता है। इन कलिकाओं के फुटाव से वांछित प्रजाति के फल अगले ऋतु में ही मिलने प्रारंभ हो जाते हैं। इस तरह अनुपयोगी वृक्ष 2 वर्षो में पूरी तरह से उपयोगी बन जाता है।

स्वस्थानिक (*इन सीटू*) विधि

स्वस्थानिक (*इन सीटू*) विधि में मूलवृन्त सीधे बाग में रेखांकन के अनुसार लगाये जाते हैं जिन पर अगले वर्ष पैबंद चढ़ाते हैं। यह विधि शुष्क क्षेत्रों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त पायी गयी है

स्थानिक विधि से विकसित बेर

प्रथम वर्ष रोपण के बाद, मूलवृंत को उचित पोषण और रख–रखाव देने से वो पूर्ण झाड़ीदार आकार ग्रहण कर लेते हैं। लगभग 8–10 माह पश्चात, अप्रैल–मई माह में इन मूलवृन्तों को भूमि की सतह से काट देते है, जिनसे थोड़े समय पश्चात एक–साथ कई कल्ले फूट जाते हैं। इन्हीं में से 1–2 ओजस्वी कल्लों पर जुलाई–अगस्त माह में कलिकायन कर देते हैं तथा शेष को भूमि की सतह से काटकर हटा देते है। चयनित कल्लों पर भूमि की सतह से 15–20 सेंटीमीटर की ऊंचाई पर पैबंद या टी विधि से कलिकायन किया जाता है, ताकि उनसे कम से कम एक अच्छा पेड़ तैयार किया जा सके। एक सप्ताह पश्चात, कलिकायन की हुई सांकुर कली में फुटाव प्रारम्भ हो जाता है। अतः मूलवृंत वाले भाग से निकलने वाले अवांछित जंगली कल्लों को नियमित रूप से काट कर अलग करते रहना चाहिए। लगभग 8–10 माह पश्चात, दो सांकुरों में से केवल एक को ही रखते है तथा दूसरे को हटा देते हैं।

रोपण

क्यों करें? 60 x 60 x 60 सेंटीमीटर आकार के गड्ढे 6 x 6 मीटर के अंतराल पर ग्रीष्म ऋतु में बनाएं.

कब करें? वर्षा ऋतु (जुलाई–अगस्त) या बसन्त माह (फरवरी–मार्च).

कैसे करें? गड्ढों को ऊपरी सतही मिट्टी एवं सड़ी खाद और कीटनाशी के साथ मिलाकर भरें.

बेर एक बहुवर्षीय वृक्ष है; अतः, नए बाग लगाने की योजना गहन विचार करके बनानी चाहिए। अन्यथा एक बार की गई गलती बाग के पूरे जीवन काल तक नहीं सुधारी जा सकती उदाहरणस्वरूप कई तथ्य, विशेषकर, बेर की प्रजाति, स्थान का चयन, खेत की तैयारी (विशेषकर क्षारीय व लवणीय मृदा में), पौध रोपाई का समय आदि पर उचित विचार करना आवश्यक है। बाग के स्थान के चयन के पश्चात, सबसे पहले चयनित खेत में से जंगली झाड़ियों इत्यादि हटाकर उसके चारो ओर कांटेदार झाड़ियों या कंटीली तार से बाड़ बनायें ताकि नील गाय, हिरण, सूअर व अन्य जानवरों से पौधों को बचाया जा सकें। बेर के पौधों के रोपण के लिए सबसे अच्छा समय मानसून का होता है। इसके लिए प्रक्षेत्र में 60 X 60 X 60 सेंटीमीटर आकार के गड्ढे ग्रीष्म ऋतु में ही 6 X 6 मीटर की दूरी पर रेखांकन कर बना लिए जाते हैं। बलूई मृदा वाले क्षेत्रों में नमी के क्षरण को कम करने के लिए, गड्ढ़ों को भरते समय बेंटोनाइट मिट्टी की परत गड्ढ़ों के तले और किनारों पर रखी जा सकती है। गड्ढा खोदकर दो दिन पश्चात गड्ढे को गोबर/मींगनी की सड़ी खादः चिकनी मिट्टीः गड्ढे की मिट्टी बराबर मात्रा में (1:1:1) अच्छी तरह मिलाकर साथ ही 50–75 ग्राम क्लोरोपाइरीफास धूल 2–4 प्रतिशत को भी मिश्रण के साथ मिला लें ताकि दीमकों से नए पौधों का बचाव हो सके। यदि चिकनी मिट्टी उपलब्ध न हो तो गड्ढे की मिट्टी एवं सड़ी खाद (गोबर अथवा मींगनी की खाद 2:1) के अनुपात में मिलाकर गड्ढे को भर दें। यदि पानी की उपलब्धता हो तो थाला बनाकर गड्ढे को पानी से भर दें जिससे खाद अच्छी प्रकार सड़ जाये। इसके बाद पौधों के रोपण से एक दिन पूर्व गड्ढों की थाला बनाकर सिंचाई कर दें और दूसरे दिन गड्ढे के मध्य में पौधे की थैली के आकार का गड्ढा खुरपी से बना लें। पौधे की थैली को गड्ढों को भरते समय ब्लेड अथवा किसी धारदार चाकू की सहायता से सावधानीपूर्वक अलग कर लेना चाहिए जिससे पौधे की पिण्डी व जड़ को किसी प्रकार की क्षति न पहुंचे। इसके बाद पौधे को तैयार गड्ढे में सावधानीपूर्वक रोपित कर खाली स्थान में आसपास की मिट्टी भरकर अच्छी तरह दबा कर तुरंत सिंचाई कर देनी चाहिए।

शुष्क क्षेत्रों में पौध–रोपण के पश्चात, एक माह तक प्रत्येक तीसरे दिन आवश्यकता अनुसार पौधों की सिंचाई करें और रोपण के 20–25 दिन बाद क्लोरोपाइरीफास 20 प्रतिशत EC 10–15 मिलीलीटर प्रति 10 लीटर पानी के साथ

पौध रोपण की पद्धति

मिलाकर पौधें के थाले में अवश्य डालें ताकि दीमक के प्रकोप से पौधों का बचाव हो सके। सामान्यतया, कलिकायन युक्त पौधों में रोपण के लगभग एक माह पश्चात मूलवृन्त से अवांछित फुटाव शुरू हो जाता है, जिसे समय–समय पर काटते रहना चाहिए ताकि कलिकायन वाले भाग की वृद्धि पर विपरीत प्रभाव न पड़े। साथ ही कलिकायन के लिए पौधे पर बांधी गयी पॉलीथीन की पट्टी को ब्लेड की सहायता से काटकर अलग कर देना चाहिए। इसके पश्चात पौधों को लगभग एक वर्ष तक गर्मी के मौसम में 8–10 दिनों तथा सर्दी के मौसम में 10–15 दिनों के अन्तराल पर आवश्यकता अनुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। सर्दी के मौसम में पौधों को पाले के प्रकोप से बचानें के लिए खींप की झोपड़ी (दिसम्बर माह में) से अवश्य ढक देना चाहिए तथा साथ ही समय–समय पर पौधें की निराई–गुडाई आवश्यकता अनुसार करते रहना चाहिए। मृदा के पी. एच. मान के अनुसार 6–8 किलो ग्राम पाइराइट अथवा जिप्सम गड्ढे के मिश्रण के साथ मिलाकर भरना चाहिए।

पौध स्थापना को बेहतर करने के लिए, वर्षा आधारित कृषि क्षेत्रों में, पेड़ों की पंक्तियों के बीच के खाली जगह को इस तरह से आकार देना चाहिए ताकि पौधे की ओर 5 प्रतिशत ढलान मिल जाए। इससे वर्षा का जल पौधों के चारों ओर एकत्र किया जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप पौध स्थापना में आशाजनक सफलता मिलेगी। सिंचित क्षेत्रों में, बेर के पौधों को फरवरी–मार्च के दौरान भी बागों में लगाया जा सकता है।

सधाई एवं कटाई-छंटाई

क्यों करें? उचित ढाँचा देने और अच्छी गुणवत्ता के फल लेने के लिए.

कब करें? मई–जून में जब पौधों की अधिकांश पत्तियां झड़ चुकी होती है.

कैसे करें? रोपण के दो–तीन साल तक सधाई के लिए कटाई–छंटाई करें, तत्पश्चात, फलन के लिए करें.

कितना करें? शाखाओं का 50 प्रतिशत भाग काट देते हैं। तृतीय शाखाओं को पूर्ण रूप से एंव द्वितीय शाखाओं की 15–20 कलियों तक काट देते हैं.

क्या न करें? पेड़ के कटे भागों को खुला न छोड़ें। बीमारी से बचाने के लिए उन पर फफूंदीनाशी का लेप करें.

उत्पादकता, फलों का आकार और गुणवत्ता बनाए रखने के लिए, बेर के पेड़ों की प्रति वर्ष सही समय पर कटाई–छंटाई करना अति आवश्यक है। कटाई–छंटाई चूर्णिल आसिता व्याधि और तेज हवाओं से होने वाले नुकसान को भी कम करता है। नियमित रूप से छंटाई किया गया बेर का पेड़ 30 साल तक युवा रह सकता है। बेर में फल मुख्यतः उसी वर्ष में तैयार हुई नई ओजस्वी टहनियों पर लगते हैं। अतः, प्रति वर्ष अधिक संख्या में नई ओजस्वी शाखाएं पैदा करने के लिए पुरानी शाखाओं की नियमित रूप में छंटाई करते रहना आवश्यक होता है। फलों का भार बहुत अधिक होने पर नई शाखाओं को भी बीच–बीच से काटने की आवश्यकता पड़ सकती है, अन्यथा मुख्य शाखाओं के टूटने का भय रहता है। रोपण के दो–तीन साल तक पौधे को मजबूत और सही आकार देने के लिए सधाई का कार्य किया जाना चाहिए। जिसके लिए, पौधों के मुख्य तने पर 3–4 प्राथमिक शाखाएं हर दिशा में रहने देते हैं, शेष सभी शाखाओं को काट देते है। एक सीधे बढ़ने वाले तने पर भूमि की सतह से 30–40 सेंटीमीटर ऊंचाई पर समान दुरी पर एंव चारों दिशाओं के फैलने वाली इन 3–4 शाखाओं को बढ़ने के लिए छोड़ देते हैं। जुलाई में रोपण पश्चात, मुख्य तने के शीर्ष को आगामी मार्च माह में कलिकायन–संयोजन बिन्दु से 1–2 आसंधि छोड़कर काट देते हैं ताकि उससे कई नए तनें निकलें। इनमे से सबसे ओजस्वी तने को मुख्य प्ररोह के रूप में बढ़ने दिया जाता है और शेष को काट कर अलग कर दिया जाता है। इस प्ररोह को जमीन से 30–40 सेंटीमीटर की ऊँचाई तक साफ रखते हैं और उसके बाद 3–4 समान दूरी पर फैलने वाली शाखाओं को बढ़ने दिया जाता है। दूसरे वर्ष के वसंत के दौरान,

द्वितीयक शाखाओं को आधार कलिकाओं तक छाँट दिया जाता है, ताकि उनसे ओजस्वी शाखाएँ निकाल सकें। आधार कलिकाओं से एक से अधिक शाखाएँ निकल सकती हैं, लेकिन इनमें से केवल एक ही रखा जाता है, जबकि शेष हटा दिया जाता है। ये शाखाएँ ही पेड़ की मुख्य शाखाएं बनती हैं। इन मुख्य शाखाओं पर भी, 3–4 ऊपर की ओर बढ़ने वाली अच्छी तरह से विन्यासित शाखाओं को बढ़ने दिया जाता है। इस प्रक्रिया को तृतीयक शाखाएं विकसित करने के लिए जारी रखा जाता है। यह आवश्यक है कि प्रत्येक आसंधि पर केवल सीधे बढ़ने वाली शाखाओं को चयन किया जाए ताकि पेड़ का मजबूत ढांचा विकसित हो सके। पेड़ के इस मूल ढांचे को समय–समय पर निकलने वाली अवांछित पार्श्व शाखाओं को हटाकर करते रहना चाहिए। इसके लिए, पैबन्द लगे स्थान के नीचे मूलवृन्त वाले हिस्से से तथा अन्य अवांछनीय, रोगग्रस्त और आपस में रगड़ खाती हुई टहनियों को समय समय पर काटते रहना चाहिए

बेर में कटाई–छँटाई

बिना कटाई–छँटाई वाले बेर के पेड़ों की छत्रक अनावश्यक रूप से बढ़ जाती है, जिससे शाखाओं का विकास पर्याप्त नहीं हो पाता और परिणामस्वरूप वो कमजोर हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त, फलों का आकार व गुणवत्ता दोनों ही खराब हो जाती है। अंततः, ऐसे पेड़ बाग में जरूरत से ज्यादा स्थान घेरने के अलावा आर्थिक रूप से अनुत्पादक हो जाते हैं। कुछ मात्रा में शाखाओं का विरलीकरण भी आवश्यक है, ताकि पर्याप्त मात्रा में सूर्य का प्रकाश और उचित वातन छत्रक के भीतरी भागों को भी मिल सके। शुष्क क्षेत्रों में कटाई–छंटाई का काम मई–जून (वैशाख–ज्येष्ठ) का महीना जब पौधों की अधिकांश पत्तियां झड़ चुकी होती हैं तथा पेड़ सुषुप्तावस्था में हों, सबसे उपयुक्त माना जाता है। कटाई–छंटाई करते समय, सामान्यतः पिछले वर्ष की शाखाओं का 50 प्रतिशत भाग काट देते हैं। तृतीय शाखाओं को पूर्ण रूप से एंव द्वितीय शाखाओं की 15–20 कलियां काट देने पर मजबूत एंव ओजस्वी शाखाएं निकलती हैं। बीमारियों के प्रकोप से बचाव के लिए शाखाओं के कटे हुए स्थानों पर फफूंदीनाशी (नीला थोथा या ब्लाइटॉक्स– 50) का लेप कर देना चाहिए। काट–छांट के लिए तेज धार वाले औजार का प्रयोग करना चाहिए ताकि शाखा क्षतिग्रस्त न हों।

पोषक तत्व प्रबंधन

अन्य फलों की अपेक्षा बेर अधिक सरलता से पैदा होने वाला फलवृक्ष है। संभवतः, इसलिए इसके पोषण तथा जल प्रबंधन की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है, परंतु, प्रति वर्ष अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए बेर का उचित पोषण आवश्यक है ताकि बड़े आकार के आकर्षक फल प्राप्त हो सकें। सामान्य तौर पर बेर के बगीचों को

पर्याप्त रूप से पोषित नहीं करते हैं। हालांकि, पौधों की उत्पादकता को पोषक तत्वों के उपयोग से सुधारा जा सकता है। बागों में दी जाने वाली खाद और उर्वरकों की मात्रा मिट्टी की ऊर्वरा क्षमता पर निर्भर करती है; अतः, मृदा स्वास्थ्य परीक्षण नितांत आवश्यक है। भारत सरकार द्वारा विभिन्न कृषि विज्ञान केन्द्रों, कृषि विश्वविद्यालयों, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों, राज्य सरकारों के अंतर्गत मृदा प्रयोगशालाओं में, मृदा की जांचकर मृदा स्वास्थ्य कार्ड (सॉइल हेल्थ कार्ड) बनाएं जा रहें हैं। यदि संभव हो तो मृदा के स्वास्थ्य के आधार पर खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करें अन्यथा, जिन क्षेत्रों (जैसे राजस्थान) की मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी होती है, उनमे बेर के अच्छे उत्पादन के लिए पौध रोपण के बाद प्रथम वर्ष 10–15 किलोग्राम गोबर/मींगनी की सड़ी हुई खाद तथा 100 ग्राम नत्रजन, 50 ग्राम फॉस्फोरस तथा 50 ग्राम पोटाश प्रत्येक पौधे में देना चाहिए। पौध रोपण के बाद दूसरे वर्ष से खाद एंव उर्वरक की उपयुक्त मात्रा को प्रति वर्ष इस तरह से बढ़ाकर दें, जिससे पांचवें वर्ष में प्रत्येक पौधे को 50–75 किलोग्राम गोबर/मींगनी की सड़ी हुई खाद, 500 ग्राम नत्रजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस एंव 250 ग्राम पोटाश की मात्रा मिल जाये। राहुरी (महाराष्ट्र) की परिस्थितियों में, प्रति वृक्ष 250 ग्राम नत्रजन और 250 ग्राम फॉस्फोरस के उपयोग से बेर में उपज कि वृद्धि देखी गयी। पोटाश के उपयोग से किसी प्रकार की वृद्धि नहीं देखी गयी। हालांकि, जब कोई अनुशंसा नहीं उपलब्ध हो तो ऐसी परिस्थितियों में, 20 किलो सड़ी खाद और 100 ग्राम नत्रजन (400 कैल्सियम अमोनियम नाइट्रेट) एक साल के बेर के पेड़ को दिया जा सकता है। खाद और नत्रजन की समान मात्रा हर साल, पौधे के पांच साल होने तक, बढ़ाई जानी चाहिए। पांच साल के बाद, खाद और नत्रजन की मात्रा क्रमशः 100 किलोग्राम और 500 ग्राम (2 किलोग्राम कैल्सियम अमोनियम नाइट्रेट) पर स्थिर किया जाना चाहिए। गोबर/मींगनी की खाद को मई–जून में देनी चाहिए। फॉस्फोरस व पोटाश मई–जून में ही दे देनी चाहिए। नत्रजन उर्वरक की आधी मात्रा वर्षा ऋतु (जुलाई–अगस्त) के दौरान और शेष मात्रा फलों के सेट (अक्टूबर–नवंबर) होने के समय दिया जाना चाहिए। उर्वरक पेड़ के तने से कुछ दूरी से जहाँ तक पेड़ का फैलाव हो समान रूप से पेड़ों के थालों में फैला हुआ होना चाहिए। उर्वरकों के प्रयोग के बाद, कुदाल या खुरपी से हल्की हल्की गुड़ाई कर देना चाहिए ताकि वो मिट्टी में भली–भांति मिल जायें। उर्वरक देने के बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए। यदि वर्षा की सम्भावना है या वर्षा कुछ पहले हुई हो तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। बेर में यूरिया (1–2 प्रतिशत) और जिंक सल्फेट (0.5 प्रतिशत) का अगस्त एवं सितम्बर में पर्णीय छिड़काव भी अत्यंत लाभकारी रहता हैं, इससे न केवल वानस्पतिक वृद्धि होती है बल्कि फल–फूल भी कम गिरते हैं और आन्तरिक गुणों में सुधार होता है। बेर को सफलतापूर्वक क्षारीय मृदा में (जिसका पीएच मान 8.5 से अधिक और विनिमेय सोडियम प्रतिशत 21 प्रतिशत से अधिक हो) लगाया जा सकता है, यदि गड्ढे भरते समय प्रत्येक गड्ढे में जिप्सम और तालाब की मिट्टी भी डाली जाए।

क्यों करें? अच्छी गुणवत्ता एवं अधिक फलन हेतु.

क्या करें? मृदा के स्वास्थ्य परीक्षण के आधार पर खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग.

कब करें? गोबर/ मींगनी की खाद, फॉस्फोरस व पोटाश मई–जून मेंय नत्रजन उर्वरक की आधा मात्रा वर्षा ऋतु में और शेष मात्रा फलों के सेट (अक्टूबर–नवंबर) के समय..

कितना करें? शाखाओं का 50 प्रतिशत भाग काट देते हैं। तृतीय शाखाओं को पूर्ण रूप से एंव द्वितीय शाखाओं की 15–20 कलियों तक काट देते हैं.

कैसे करें? उर्वरकों के प्रयोग के बाद, कुदाल या खुरपी से हल्की हल्की गुड़ाई कर दें.

जल प्रबंधन

पौधें छोटे व नए होने के कारण रोपाई के प्रथम वर्ष में सिंचाई की आवश्यकता अधिक होती है। किशोर

क्यों करें? पौधों की जीवन रक्षा, अच्छी गुणवत्ता एवं अधिक फलन हेतु.

कब करें? किशोर पौधों को नियमित अंतराल पर तथा विकसित वृक्षों को जून में उर्वरक प्रयोग के बाद तथा मानसून पश्चात फल बनने की स्थिति में 15–20 दिन के अंतराल पर.

कैसे करें? सतही अथवा ड्रिप (टपक विधि) से.

क्या न करें? किस्म विशेष के सम्भावित पकने के समय से 15 दिन पहले

पौधों की स्थापना के लिए, पहले वर्ष के दौरान 10 सिंचाई आवश्यक माना जाता है। बेर का पौधा, एक बार जमने के बाद, अन्य फलदार फसलो की तुलना में कम वर्षा वाले, सूखा पड़ने वाले तथा असिंचित क्षेत्रों में भी अधिक उत्पादन दे सकता है। गर्मी की सुषुप्तावस्था के बाद मध्य जून तक अगर वर्षा नहीं हो तो सिंचाई आरम्भ कर देना चाहिए ताकि पौधों की वानस्पतिक वृद्धि समय पर शुरू हो सके। इसके बाद अगर मानसून की वर्षा का वितरण ठीक हो तो सितम्बर तक सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है, अन्यथा सिंचाई का प्रबंध करें। फूल आने से पहले व फल बनने की स्थिति में 15–20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करने पर बेर से अच्छी गुणवत्ता के साथ अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। सितम्बर में फूल आना शुरू होते हैं और अक्टूबर के मध्य तक फल लग जाते है। अतः, इस दौरान हल्की सिंचाई करें। इसके बाद अगर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो 15 दिन के अन्तर पर सिंचाई कर सकते है। किस्म विशेष के सम्भावित पकने के समय से 15 दिन पहले सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए ताकि फलों में मिठास व अन्य गुणों का विकास अच्छा हो सकें। इस अवस्था में पौधों को पानी देना हानिकारक होता है क्योंकि इससे फलों की परिपक्वता में देरी, उनके फटने व रोग लगने की समस्या भी बढ़ जाती है। प्रत्येक सिंचाई के बाद बाग से खरपतवार निकालते रहना चाहिए जिससे बाग की नमी व पोषक तत्व सुरक्षित रहें। सतही सिंचाई व्यवस्थाओं की तुलना में ड्रिप (टपक विधि) से सिंचाई करने पर बेर मे प्रति वृक्ष 19 प्रतिशत पानी की बचत होती है, जबकि उत्पादन में 31 प्रतिशत की अभिवृद्धि पायी गयी है।

सुषुप्तावस्था के दौरान, बेर को कम या सिंचाई की कोई आवश्यकता नहीं होती है; इसलिए, यदि इस अवधि के दौरान सिंचाई नहीं करना चाहिए अन्यथा यह अवांछित पादप वृद्धि को बढ़ावा देगा। सूखे क्षेत्रों में नए पौधों की स्थापना के लिए, जलतृप्ति को उपयोग में लाया जा सकता है। यह एक दोहरे दीवार वाला पात्र होता है, जिसके प्रयोग से 75 प्रतिशत जल को बचाया जा सकता है। जलतृप्ति के अंदरूनी पात्र (जोकि दोनों सिरों पर खोखला होता है) में पौधे को लगाया जाता है और पानी को बाहरी पात्र (जिसकी तली बंद होती है) में भर दिया जाता है। चूंकि, यह पात्र मिट्टी से बना होता है, इसलिए पात्र के अंदरूनी दीवार से रिसकर पानी पौधे को उपलब्ध होता है। विभिन्न शोधों में, जलतृप्ति में उगाये जाने वाले पौधों की वृद्धि, सीधे गड्ढे में लगाए हुए पौधों की तुलना में बेहतर पाई गयी।

जलतृप्ति

काली पॉलिथीन तथा जैविक वस्तुओं जैसे बुई, सरकंडा, धान का पुआल या भूसी, मूंगफली के छिलके इत्यादि की पलवार लगाने से मिट्टी की नमी को संरक्षित रखा जा सकता है। जैविक पलवार लगाने से उनके सड़ने पर मिट्टी को कार्बनिक पदार्थ एवं पोषक तत्व भी मिलते हैं। परंतु, दीमक के ज्यादा प्रकोप वाले क्षेत्रों में जैविक पलवार लगाने से दीमकों के प्रकोप के बढ़ने की आशंका ज्यादा होती है। ऐसे क्षेत्रों में पॉलिथीन की पलवार लगाना बेहतर होगा। इसी प्रकार, प्रति–वाष्पोत्सर्जक जैसे 0.1 प्रतिशत तेल (ट्रांसफॉर्मरों में उपयोग होने वाला) और 7.5 प्रतिशत कओलिन के छिड़काव से भी पेड़ों से होने वाले नमी के ह्रास को कम किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, हल्की गुड़ाई करने से भी मृदा में बनी केशिकाएँ टूट जाती हैं, जिससे पानी का ह्रास रूक जाता है। इस प्रक्रिया को प्रत्येक बारिश के बाद दोहराया जाना चाहिए ताकि मृदा में नमी संरक्षित रहे।

तुड़ाई, उपज और विपणन

बेर कि वानस्पतिक वृद्धि तेज होती है और पहला फलन रोपण के 2–3 साल के भीतर लिया जा सकता है, परन्तु व्यावसायिक उत्पादन 6–7 वर्ष की आयु में ही शुरू हो पाता है। फल लगने से पूर्ण परिपक्वता तक लगभग 22 से 26 सप्ताह लगते हैं। चूंकि बेर के सभी फल एक समय में नहीं पकते हैं; अतः तुड़ाई 4–5 बार में की जाती है। फलों को हमेशा परिपक्वता के सही चरण पर ही तोड़ा जाना चाहिए, यानि जब वह न तो बहुत पकें हो और न ही अधपके हो। कच्चे तथा अधपके फल दोनों ही स्वाद की दृष्टि से निम्न स्तर के होते हैं, जबकि मिठास तथा खटास का उचित सम्मिश्रण केवल भली–भांति पके फलों में ही मिलता है। विभिन्न किस्मों को उनके सामान्य आकार और विशिष्ट रंग के हो जाने पर ही तोड़ना चाहिए, जैसे उमरान को तब तोड़ना चाहिए जब फल सुनहरे–पीले रंग के हो जाएँ। प्रायः, तुड़ाई हाथ द्वारा की जाती है। डंडे आदि का उपयोग करने पर फलों को चोट पहुंचती है।

तुड़ाई एवं श्रेणीकरण

बेर का विपणन

जहां तक संभव हो, तुड़ाई सुबह ही की जानी चाहिए। साथ ही फल को अच्छी दशा में लम्बे समय तक बनाये रखने के लिए फलों की तुड़ाई सुबह या शाम के समय करनी चाहिए। तुड़ाई का समय प्रजाति और कृषि–जलवायु पर निर्भर करता है उदाहरणस्वरूप दक्षिण भारत में, अक्टूबर–नवंबर, गुजरात में दिसंबर–मार्च, राजस्थान में जनवरी–मार्च और हरियाणा, पंजाब और उत्तर प्रदेश में फरवरी–अप्रैल के दौरान बेर कि तुड़ाई होती है। बेर के वृक्ष 10–20 वर्ष कि आयु के दौरान सबसे ज्यादा उपज देते हैं।

विभिन्न किस्मों की औसत उपज 80–200 किलोग्राम प्रति वृक्ष के बीच होती है, जबकि वर्षा–आधारित क्षेत्रों में उपज 50–80 किलोग्राम प्रति पेड़ तक हो होती है। तुड़ाई उपरांत अच्छे बाजार भाव व लम्बे समय तक भंडारण के लिये फलों का वर्गीकरण आवश्यक है। अतः तुड़ाई के समय किस्म के अनुसार फलों को अलग–अलग रखा जाना चाहिए। इसके बाद फलों को उनके रंग व आकार के अनुसार छंटाई की जानी चाहिए।

क्यों करें? बाजार में फलों का उचित मूल्य प्राप्त करने के लिए फलों को स्वाद की दृष्टि से इष्टतम अवस्था पर तुड़ाई करें.

कब करें? विभिन्न किस्मों को उनके सामान्य आकार और विशिष्ट रंग के हो जाने पर सुबह या शाम के समय तोड़ना चाहिए.

कैसे करें? जहाँ तक संभव हो तुड़ाई हाथ द्वारा करें. तुड़ाई पश्चात फलों को पूर्वशीतन अवश्य करें, तदोपरांत श्रेणीकृत कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें. भण्डारण के लिए, फलों को 10 डिग्री सेल्सियस तापमान और 80% आर्द्रता पर संग्रहीत करें.

क्या न करें? तुड़ाई के लिए डंडे आदि का उपयोग न करें, इससे फलों की गुणवत्ता पर असर पड़ता है।.

फलों को बड़े, मध्यम और छोटे आकार के समूहों में वर्गीकृत किया जाना चाहिए। फलों को 'ए', 'बी' और 'सी' ग्रेड या वर्गों में श्रेणीकृत करना चाहिए। 'ए' वर्ग में चमकदार पीले, बड़े एवं मध्यम आकार, एकरूप आकृति तथा बिना किसी विकृति या धब्बे–रहित फलों का चुनाव किया जाना चाहिए। इसी प्रकार 'बी' वर्ग के लिए अनियमित पीले या पीले–लाल, बड़े एवं मध्यम आकार, एकरूप आकृति तथा थोड़े विकृति या धब्बे–युक्त एवं 'सी' वर्ग के लिए लाल, अनियमित पीले, मध्यम और छोटे आकार के अधिकांशतः विकृति या धब्बे–युक्त फलों का चयन करना चाहिए। छंटाई उपरांत फलों को कपड़े की चादरों, जूट के बोरों, नाइलोन के जालीदार थैलियों, बांस की टोकरियों या लकड़ी या गत्ते के डिब्बों में बाजार भेजा जा सकता है। स्थानीय बाजार के लिए आम तौर पर फलों को चादरों या बोरों में पैक किया जाता है। दूरस्थ बाजारों के लिए 'ए' ग्रेड या उच्च दर्जे के फलों को 8–9 किलो क्षमता के छिद्रित कार्डबोर्ड डिब्बों, जिनमें कागज की कतरन को गद्दे के रूप में बिछाया गया हो, में पैक किया जाता है, जबकि निम्न दर्जे के फलों को टोकरियों या बोरों में भरकर भेजा जाता है। स्थानीय बाजारों में प्रायः बेर को 1–2 किलो की पैकिंग में नाइलोन के जालीदार थैलियों में भरकर बेचा जाता है। तुड़ाई के तुरंत उपरांत फलों को 10 डिग्री सेल्सियस पर पूर्वशीतन कर लेने से उनकी निधानी आयु बढ़ जाती है। बेर के फलों को छिद्रित पॉलिथीन थैलियों में रखकर 8–12 दिनों के लिए कमरे के तापमान पर संग्रहीत किया जा सकता है। अगर फलों को 10 डिग्री सेल्सियस तापमान और 80% आर्द्रता पर संग्रहीत किया जाए तो उन्हें 30 से 40 दिनों तक भंडारित किया जा सकता है। फलों की निधानी आयु बढ़ाने के लिए, तुड़ाई के 10 दिन पूर्व 1 प्रतिशत कैल्शियम नाइट्रेट का छिड़काव करना चाहिए। इसी प्रकार भंडारण से पहले, फलों को 1–2 प्रतिशत कैल्सियम नाइट्रेट के घोल में डुबोने से उनकी निधानी आयु बढ़ जाती है। फलों को 1 प्रतिशत बाविस्टीन और मोम पयस्य से उपचारित कर छिद्रित पॉलिथीन थैलियों में संग्रहीत करने पर भी उनकी भंडारण आयु में वृद्धि होती है।

मूल्य संवर्धित उत्पाद

बेर में फलन प्रायः बहुतायत में होती है और कभी–2 ज्यादा उत्पादन होने से बाजार में भरमार हो जाती है, जिससे कृषकों को उनके उत्पाद का उचित मूल्य नहीं मिल पता है। ऐसी परिस्थितियों में यदि बेर को मूल्यवर्धित कर प्रसंस्कृत उत्पाद तैयार कर लिए जाएँ तो उन्हें लंबे समय तक परिरक्षित कर सेवन किया जा सकता है। इस प्रकार से मूल्यवर्धित उत्पादों का न केवल बाजार में उचित मूल्य प्राप्त होगा अपितु इससे ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योगों को भी बढ़ावा मिलेगा। बेर के फलों से विभिन्न प्रकार के प्रसंस्कृत उत्पादों जैसे निर्जलीकृत छुआरें, शर्बत, जैम, मुरब्बा, पेठा, स्क्वैश, चटनी, अचार इत्यादि बनाए जा सकते हैं। निर्जलित फलों को लंबे समय तक रखा जा सकता है और वे बेमौसम में प्रयोग में लाये जा सकते हैं। ऐसी किस्मों के फल जो आकार में छोटे तथा खट्टे होते हैं उन्हें सुखाने के पश्चात चूर्ण बनाने में प्रयोग कर सकते हैं। फलों को निर्जलीकृत कर भंडारण कर सकते हैं तथा आवश्यकता होने पर छुहारे के रूप में अथवा पुनर्जलीकरण के उपरांत खाने के लिए प्रयोग में ला सकते हैं। इसके लिए पूर्ण विकसित तथा पके फलों को विवर्णिकरण (2–6 मिनट के लिए उबलते पानी में डुबोना) के पश्चात गधंक का धुआं (3.5 से 10 ग्राम प्रति किलो फल) 3 घंटे तक देकर 60 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 10–15 प्रतिशत नमी तक सुखाते हैं। अनुपचारित फलों को सीधे धूप में सुखाने से तैयार उत्पाद की गुणवत्ता निम्न स्तर की होती है, अतः उपरोक्त बताए गए विधि से उपचरित फलों को सौर शोषक (4–5 दिन) अथवा कैबिनेट शोषक (20–35 घंटे) में सुखाने से उच्च गुणवत्ता के निर्जलीकृत बेर प्राप्त किए जा सकते हैं। निर्जलीकरण के लिए काठा या उमरान, बगवाड़ी, छुहारा, महरून, सनौर–2 और इलाइची प्रजातियाँ उपयुक्त हैं।

इसी प्रकार, मुरब्बा और पेठा बनाने के लिए उमरान, बनारसी कड़ाका तथा कैथली जैसे प्रजातियाँ उपयुक्त होती हैं। इन्हें बनाना के लिए पूरी तरह परिपक्व फल, जिनका गूदा थोड़ा दृढ़ होता है, का चुनाव करते हैं। फलों को सबसे पहले चाशनी के उचित संसेचन के लिए वेधित और नर्म किया जाता है। फलों को नर्म करने के लिए को विवर्णिकरण (2–3 मिनट के लिए उबलते पानी में डुबोना) करते हैं। चीनी के संसेचन के लिए 30 डिग्री ब्रिक्स के चाशनी से प्रारम्भ कर धीरे–धीरे उसमे चीनी की मात्र को बढ़ाते हुये लगभग 65–70 डिग्री ब्रिक्स सांद्रता तक लाते हैं। पेठा तैयार करने के लिए चाशनी को 70–75 डिग्री ब्रिक्स की सांद्रता तक बढ़ाते हैं तथा फल 10–15 दिनों तक इस गाढ़े चाशनी में डूबे रहते हैं। अंत में, चाशनी को निथार कर फलों को सुखाते हैं जिन्हें बाद में वायु रहित जारों या पॉलीथिन की थैलियों में पैक कर दिया जाता है।

बेर से तैयार विभिन्न मूल्य संवर्धित उत्पाद (बाएं से): निर्जलीकृत छुहारे, चूर्ण, शर्बत और अचार

विशिष्ट उद्यानिकी-तकनीकें

शुष्क जलवायु में सफल बेर उत्पादन के लिए निम्नवत विशिष्ट उद्यान–तकनीकों को अपनाया जाना चाहिए

आश्रय पट्टी

शुष्क कृषि–जलवायु में बहुधा फलों का उत्पादन आशानुरूप नहीं होता है। हालांकि, बाग में विशेष रूप से पश्चिमी और उत्तरी दिशाओं में वृक्षों की आश्रय पट्टी स्थापित कर सूक्ष्म–जलवायु को बेहतर बनाकर उत्पादकता में सुधार लाया जा सकता है। अस्थायी आश्रय के लिए, तेजी से बढ़ती छोटी अवधि वाली झाड़ियों को वैयक्तिक प्रखंडों के आसपास लगाया जा सकता है। शुष्क क्षेत्रों में जंगली जानवरों के नुकसान से बचाने के लिए, कांटेदार झाड़ियों (बोरडी, झड़बेर, करौंदा आदि) को आश्रय पट्टी के वृक्ष पंक्तियों के बीच लगाया जाता है।

बहुफसली खेती प्रणाली

एकल–फसल पद्धति से जुड़े हुये अनिश्चितताओं के कारण शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्र में एकल–फसल उत्पादन पद्धति अत्यधिक जोखिमों से भरा होता है। इस पद्धति में फसल बर्बाद होना सामान्य है और प्रायः यह एक बड़े आर्थिक नुकसान का कारण बनता है। इसलिए, बाग में एक से अधिक फल प्रजातियों के रोपण के कारण कुछ उत्पादन सुनिश्चित हो सकता है, यदि विषम परिस्थितियों में कोई विशेष फसल विफल हो जाती है। बाग लगाने के प्रारम्भिक वर्षों (3–4 वर्ष तक) में, लघु अवधि के फल या अन्य फसलों को अंतरसस्य फसल के रूप में उगाया जा सकता है। अंतरसस्य फसल का चयन करते समय, उनके वानस्पतिक विकास, पुष्पन और फलन का उस स्थान के मौसम और बाजार की मांग के परिप्रेक्ष्य में उपयुक्तता पर विचार करने के बाद ही चयन किया जाना चाहिए। राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों (के.शु.बा.सं., बीकानेर में), बेर प्रजाति गोला को तीन दूरियों पर लगाया गया ताकि अंतरसस्य फसल लेने के लिए सर्वोत्तम दूरी का मानकीकरण किया जा सके। विभिन्न फसलों के संयोजन, जैसे बेर+गेहूं – मूंगफली, बेर+ग्वारफली– सरसों, बेर+ग्वारपाठा और एकल बेर की फसल का मूल्यांकन किया गया। इन संयोजनों में, बेर+ग्वारफली– सरसों सबसे अच्छा पाया गया क्योंकि इससे बेर फल (15.6 क्विंटल प्रति हेक्टेयर), हरा चारा (12.5 क्विंटल प्रति हेक्टेयर), ईंधन की लकड़ी (8.5 क्विंटल प्रति हेक्टेयर), ग्वारफली (6.78 क्विंटल प्रति हेक्टेयर) और सरसों (1.22 क्विंटल प्रति हेक्टेयर) प्राप्त हुआ था, जिससे उत्पादकों को कुल रुपये 68264 प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष शुद्ध मुनाफा हुआ। इसके अलावा, परिणाम बताते हैं कि इस प्रकार के फसल समायोजन व्यवस्था में लंबे समय तक अंतरसस्य नहीं लिया जा सकता है जोकि पारंपरिक दूरी पर लगाए गए बागों में केवल प्रारम्भिक वर्षों में ही संभव हो सकता है। इसी तरह गोधरा जैसे अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में

बेर में ग्वारफली और सरसों के साथ अंतरसस्यन

सुबाबूल और बेर के साथ यूकेलिप्टस का संयोजन अच्छा पाया जबकि जोधपुर में बागवानी फसलों के साथ बफर घास की खेती को अच्छा पाया गया।

अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ है कि बहुवर्षीय फल वृक्षों एवं वार्षिकी फसलों को एक साथ उगाने से, एकल फसल उत्पादन कि तुलना में, सम्मिलित उत्पादन से 40–50 प्रतिशत अधिक लाभ मिलता है। राष्ट्रीय बीजीय मसाला अनुसंधान केंद्र, अजमेर में किए गए शोध से पता चलता है कि विभिन्न बीजीय मसालों को आंवला अथवा बेर के साथ विभिन्न समायोजनों के साथ सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है, उदाहरणस्वरूप (i) बेर/आंवला+कलोंजी+चंवला; (ii) बेर/आंवला +विलायती सौंफ+ग्वार; (iii) बेर/आंवला +राई+ऊड़द; (iv) बेर/आंवला+मेथी+भिंडी; (v) बेर/आंवला +धनिया+मूंग।

बेर के साथ धनिया की खेती में धनिया के बीज कि उपज लगभग 528 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तथा फल उपज 25256 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है। इसी प्रकार, बेर+मेथी में बीज उपज लगभग 1255 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर एवं फल उपज 26271 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर, बेर+अजवाइन में बीज लगभग 559 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर जबकि फल उपज 24886 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है। इसी प्रकार, आंवला के साथ धनिया में अंतरसस्यन करने पर बीजोत्पादन लगभग 512 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर पाया जा सकता है। आंवला+मेथी में बीज एवं फल का उत्पादन क्रमशः 1220 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तथा 48357 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है।

अंतरसस्यन में दलहनी फसलों को वरीयता देनी चाहिए क्योंकि वो मृदा में वातावरणीय नत्रजन को समाहित कर मृदा की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती हैं। ये फसलें मृदा कटाव को भी रोकती है तथा भूमि की भौतिक दशा एंव जल धारण क्षमता को भी बढ़ाती हैं। सिंचित क्षेत्रों में, मटर, चना, जीरा, मिर्च, मेथी को बेर के बागों में लिया जा सकता है जबकि बारानी क्षेत्रों में खरीफ के दौरान मूंग, मोठ, लोबिया और ग्वारफली को लिया जा सकता है। सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने पर कुछ सब्जियां जैसे मिर्च, टमाटर, मटर, गोभी, मूली आदि भी अन्तरसस्य के रूप में उगाई जा सकती हैं। कद्दू वर्गीय सब्जियों को अन्तरसस्यन में नहीं उगाना चाहिए। बेर के बाग में, बागानी के अलावा मधुमक्खी पालन तथा बकरी पालन या मुर्गी पालन भी किया जा सकता है। इसके अलावा बबूल, कीकर, नीम, अडूसा और आर्थिक महत्व के अन्य बहुद्देशीय पेड़ों की प्रजातियां को खेतों के किनारे पर लगाकर खेत की घेराबंदी की जा सकती है। इससे न केवल चारा और ईंधन की लकड़ी प्राप्त होगी बल्कि मृदा की सुरक्षा और संरक्षण के साथ उर्वरकता के स्तर में भी वृद्धि होगी। अलग–अलग प्रकार की प्रजातियों की घेराबंदी से गर्मियों के दिनों में गर्म हवा से फसल की सुरक्षा भी हो सकेगी। इससे न केवल वाष्पोत्सर्जन नुकसान में कमी आएगी बल्कि इसके सुखदायक प्रभाव से पौधों तथा फसल प्रणाली में भी अधिक प्रभावात्मकता आएंगी और वो प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने के लिए अधिक तैयार हो सकेंगे। बकरियों और मुर्गियों के मल–मूत्र की कम्पोस्टिंग कर अच्छा खाद भी तैयार किया जा सकता है, जिसे खेती में प्रयुक्त किया जा सकता है।

रोग प्रबंधन

छाछया/चूर्णिल आसिता रोग

यह एक कवक *(ऑइडियम इरीसिफोइड्स)* से फैलने वाली बीमारी है। इस रोग में सबसे पहले पौधों की टहनियों, पत्तियों एवं फलों पर सफेद चूर्ण जैसी फफूंद दिखायी देती है। बाद में यह फफूंद पूरे फल व पत्ती पर फैल जाती है। संक्रमित फल आकार में छोटे एवं सिकुड़ जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए केराथेन (डिनोकेप) नामक कवकनाशी (10 मिलीलीटर प्रति

चूर्णिल आसिता

10 लीटर पानी में) का एक छिड़काव सितम्बर माह के शुरू में फूल आने से पहले रोग बचाव के रूप में छिड़काव करना लाभप्रद होता है। इसके अतिरिक्त, केराथेन नामक कवकनाशी (10 मिलीलीटर प्रति 10 लीटर पानी में) का मटर के समान फल आने की अवस्था पर छिड़काव करना तथा 15 दिनों के अन्तराल पर 1–2 बार छिड़काव करना चाहिए।

फल सड़न रोग

फल सड़न

यह एक कवक से फैलने वाली बीमारी है। इस रोग में फलों पर भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में भूरे काले रंग के हो जाते हैं। रोग ग्रसित फल जल्दी से टूट कर गिर जाते हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए नवम्बर में लक्षण दिखाई देते ही मेंकोजेब या इंडोफिल जैड–78 नामक कवकनाशी (2 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव करना चाहिए। साथ ही, नीचे गिरे रोग ग्रसित फलों को नष्ट कर देना चाहिए।

पत्तियों का काला धब्बा रोग

पत्ती का काला धब्बा

यह कवक *(इसरिओप्सिस इंडिका)* जलित रोग अक्तूबर से दिसंबर माह में ज्यादा दिखाई देता है। पत्तियों की निचली सतह पर छोटे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में काले रंग के हो जाते हैं। इस रोग के प्रबंधन के लिए मटर के समान थोड़ा बड़ा फल होने की अवस्था पर बेविस्टीन या डाईफोलेटॉन नामक दवा का छिड़काव 1–2 ग्राम प्रति लीटर के दर से करें।

कीट प्रबंधन

फल मक्खी

फल मक्खी से ग्रसित फल

बेर में आर्थिक रूप से सबसे ज्यादा नुकसान करने वाला प्रमुख कीट फल मक्खी है, जिसका वैज्ञानिक नाम *कार्पोमिया वेसुवियाना* है। मक्खी छोटे विकासशील फलों में छेदकर अंडे देती है। फल मक्खी का प्रकोप सितंबर माह में शुरू हो जाता है जब फल बहुत छोटे होते हैं और यह तुड़ाई तक जारी रहता है। प्रभावित फल कुरूप हो जाते हैं और उनका विकास भी धीमा हो जाता है। ऐसे फल विपणन के लिए अयोग्य हो जाते हैं। फल मक्खी के नियंत्रण के लिए गर्मियों के महीनों में खेत की गहरी जुताई करें ताकि मक्खी के प्यूपे नष्ट हो जाएं। साथ ही प्रभावित फलों को नष्ट करें। फल मक्खी फलों को तब ज्यादा नुकसान करती है जब वो 'मटर' के दाने के बराबर होतें हैं; इसलिए, इसी अवस्था पर मोनोक्रोटोफॉस (0.01 प्रतिशत) की तरह किसी भी क्रियाविधि आधारित/आमाशयगत कीटनाशक का छिड़काव करना आवश्यक है, जिसे तीन सप्ताह बाद स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये दोहराया जाना चाहिए। प्रौढ़ मक्खियों को मारने हेतु बाग में 4–5 जगह खुले पात्रों में मिथाईल यूजीनोल के फेरोमोन पाश या ट्रैप का प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त, फल मक्खी प्रतिरोधी किस्में जैसे सनौर–1, सफेदा, इलाइची, काठा, तिकड़ी, बी एस–1, उमरान और मेहरून इत्यादि की खेती की जा सकती है।

छाल खाने वाला इल्ली

इस कीट (*इंडरबेला क्वाड्रानोटाटा*) की इल्ली तने की छाल को खाकर इसमें छेद कर देती है। इस कीट की इल्लियाँ, प्राय:, पेड़ की शाखाओं की संधियों में छेद करती हैं, जिससे शाखाएँ कमजोर होकर सूख जाती हैं अथवा अपने ही वजन से गिर जाती हैं। यह कीट उन बागों में ज्यादातर पाया जाता है, जहां बाग की उचित देखभाल नहीं होती है। छाल खाने के बाद इल्ली एक प्रकार का काला अवशेष छोड़ती है जो प्रभावित हिस्सों पर चिपका रहता है। इस कीट की रोकथाम के लिए बाग को साफ रखना चाहिए तथा तने में बने हुए छिद्रों में क्लोरोफॉर्म, पेट्रौल या मिट्टी के तेल में रूई डुबोकर भरने के बाद छेदों को गीली मिट्टी से बंद कर देना चाहिए। यह कीट रात के दौरान सक्रिय हो जाता है और दिन के समय में तनों में छुपा रहता है।

छाल खाने वाले कीट से नुकसान

पत्ते खाने वाली भृंग

इस कीट (*एडोरोटस पैलनज*) का प्रकोप शुष्क व अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में बहुत होता है। हल्के भूरे रंग के वयस्क भृंग रात के दौरान सक्रिय होते हैं और पत्तियों को खातें हैं। यह कीट बरसात के मौसम में सबसे अधिक सक्रिय होता है। ये पत्तों पर गोल छिद्र करके नुकसान पहुंचाते हैं तथा अधिक प्रकोप की अवस्था में वृक्षों में पत्ते खत्म कर देते हैं, जिससे इस तरह के वृक्षों पर फल भी नहीं लगते हैं। इसे मोनोक्रोटोफॉस (0.01 प्रतिशत) या क्लोरोपाइरीफॉस (0.02 प्रतिशत) के छिड़काव द्वारा प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सकता है।

गुठली का घुन

इस कीट (*अबेयस हिमालयानस*) के वयस्क छोटे विकसित होते फलों के वर्तिकाग्र पर अंडे देते हैं, जिनसे शिशु डिंभक निकलकर फलों की कोमल गुठलियों में प्रवेश कर जाते हैं। तदोपरांत, यह कीट अपना पूरा जीवन चक्र उसी ग्रसित फल के गुठली में पूरा करता है। यह कीट गुठली को अंदर ही अंदर खाते रहते हैं, जिससे फल का भी विकास रुक जाता है और ऐसे ग्रसित फल कदाचित ही परिपक्वता को प्राप्त कर पाते हैं। ग्रसित फलों के वर्तिकाग्र पर कीट के प्रवेश के कारण महीन सुई के नोंक जैसा काला दाग बन जाता है। इसके नियंत्रण के लिए ग्रसित फलों को एकत्रित कर नष्ट कर देना चाहिए और कार्बरिल 50 डबल्यूडीपी के 0.1 प्रतिशत का छिड़काव फल सेट होने की अवस्था तथा दूसरा छिड़काव तीन हफ्ते के अंतराल पर करना चाहिए।

गुठली की घुन

दीमक

शुष्क क्षेत्रों में बेर को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचाने वालों कीट में दीमक प्रमुख है। यह जमीन में रहकर वृक्षों की जड़ों को खाकर तने को खोखला करते हुए ऊपर की ओर बढ़ते हैं अथवा पेड़ों की बाहरी सतह पर मिट्टी की सुरंग बनाकर इसके अन्दर रहकर छाल को खाते हैं जिससे वृक्ष सूखकर मर जाते हैं। ऐसे तो वर्ष पर्यंत इनका

प्रकोप बना रहता है, लेकिन सर्दी व बरसात के समय प्रकोप कम हो जाता है। इनके नियंत्रण के लिए, खेत को साफ–सुथरा रखें तथा बाग में कोई भी चीज, जैसे–ठूंठ, गली–सड़ी, सूखी लकड़ी इत्यादि न रहने दें, जो दीमक के प्रकोप को बढ़ावा देती है। इसके अतिरिक्त, गोबर की कच्ची खाद प्रयोग में न लाये क्योंकि यह खाद दीमक को बढ़ावा देती है। प्रभावित पौधों को क्लोरोपाइरीफॉस (1 मिलीलीटर प्रति लीटर) से उपचरित करें।

विकसित पेड़ को दीमक से नुकसान

दैहिक विकार

फलों का झड़ना

मुख्य रूप से दिसंबर माह के बाद, फलों के सेट होने के तुरंत बाद फलों का गिरना देखा गया है जो काफी हद तक अपर्याप्त निषेचन अथवा बीजाण्डों के अधः–पतन के कारण होता है। यह पतन प्रकृतिक होता है, जिससे भयभीत होने की अवश्यकता नहीं होनी चाहिए। बेर के फलों का विकास पहले छह सप्ताह और आखिरी के बारह सप्ताह के दौरान सबसे अधिक होता है, जबकि मध्य के छह सप्ताह की अवधि के दौरान यह विकास बहुत धीमा होता है। इस अवधि के दौरान पादप वृद्धि अवरोधकों का संश्लेषण फलों में पादप वृद्धि वर्धक नियामकों जैसे ऑक्सिन की तुलना में ज्यादा होता है, जिसके फलस्वरूप फलों का झड़ना होता है जोकि आर्थिक रूप से वांछित नहीं होता है। अतः फलों का आकार बढ़ाने व उन्हें झड़ने से रोकने हेतु जिब्रेलिक अम्ल (80 पी.पी.एम.) के दो छिड़काव (अक्टूबर व दिसम्बर माह में) लाभकारी पाए गए हैं। इसी प्रकार नेफ्थेलिन एसीटिक अम्ल (25 पी.पी.एम.) का पूर्ण पुष्पन या फलन के पूर्व छिड़काव, फलों के आकार एवं गुणवत्ता में विकास हेतु अच्छा पाया गया है। फलों में रंग परिवर्तन के समय इथेफोन (500 पी.पी.एम.) का छिड़काव भी लाभकारी पाया गया है।

फलों का फटना

कई अन्य फलों की तुलना में बेर में फलों का फटना बहुत बड़ी समस्या नहीं है। परंतु, पके फलों, विशेषकर, देर से तोड़े गए फलों में में यह समस्या ज्यादा देखी गयी है। ऐसा परिपक्व फलों में घुलनशील शर्कराओं के बढ़ने तथा जल विभव तथा छिलकों के दृढ़ता में कमी आने के कारण होता है। अतः, फलों को उनके किस्मों के आधार पर परिपक्व होने की सही अवस्था में ही तोड़ लेना चाहिए। फलों का फटना, देर से तोड़े गए कठाफल किस्म में सबसे ज्यादा देखी गयी है; हालांकि, गोला और सेब में भी फलों का फटना कोई असमान्य घटना नहीं है।

काठाफल में फलों की घटना

फलों के वर्तिकाग्र का भूरापन

इस विकार को बेर प्रजाति छुहारा में देखा गया है। इस विकार को फल परिपक्वता में प्रगति के साथ बढ़ता पाया गया है। तुलना में, विकार प्रभावित फल सामान्य फल के समान ही वजन और बनावट में होते हैं। परंतु,

विकार प्रभावित फलों में घुलनशील ठोस सामग्री, शर्करा और एस्कॉर्बिक एसिड कम होता है। पोषक तत्व विश्लेषण पर, सामान्य, स्वस्थ फलों की तुलना में विकार प्रभावित फलों में बोरान तत्व की मात्रा अधिक पाया पायी गयी है। चूंकि, यह विकार देर से कटाई की अवधि के दौरान प्रकट होता है, अतः, छुहारा के फलों को परिपक्वता की सही अवस्था पर ही तोड़ लेना चाहिए।

छुहारा में फलों के वर्तिकाग्र का भूरापन

आय-व्यय का विवरण

शुष्क क्षेत्रों में कई व्यावसायिक फसलों की तुलना में बेर की खेती लाभकारी है। एक पूर्ण विकसित बाग से लगभग एक लाख रुपये तक का विशुद्ध मुनाफा कमाया जा सकता है। हालांकि, प्रारंभ के वर्षों में, फलन नहीं या कम होने से व्यय ज्यादा होगा परंतु अंतरसस्यन द्वारा इस घाटे की भरपाई की जा सकती है। बेर में लाभ भी प्रजाति पर निर्भर करता है। जिन क्षेत्रों में एपल बेर की मांग है, उन क्षेत्रों में एपल बेर की खेती कर बागबान कम समय में ज्यादा मुनाफा प्राप्त कर सकते हैं।

तालिका 2: बेर की खेती के आय–व्यय का विवरण

पौधों की आयु	फल उपज (किग्रा./हे)	आय (रु./हे.)	लकड़ी की उपज (किग्रा./हे.)	आय (रु./हे.)	कुल आय (रु./हे.)	कुल व्यय (रु./हे.)	शुद्ध लाभ (रु./हे.)
1	–	–	–	–	–	25000	–25000
2	–	–	100	300	300	15000	–14700
3	1000	10000	450	1350	11350	27000	–15650
4	1500	15000	900	2700	17700	32000	–14300
5	6000	60000	1500	4500	64500	50000	+14500
6	10000	100000	1800	5400	105400	50000	+54400
7 वर्ष या अधिक	15000	150000	2200	6600	156600	60000	+96600

बेर को बड़े पैमाने पर नहीं उगाया जाता है और इसकी खपत और व्यापार दोनों ही, भौगोलिक और मात्रात्मक रूप से, मुख्य वाणिज्यिक फलों की तुलना में सीमित होते हैं बावजूद इसके कि यह पोषण और औषधीय गुणों से भरपूर होता है तथा प्रतिकूल मृदा और जलवायु परिस्थितियों में उत्पादन करने की क्षमता रखता है। इसके अतिरिक्त, अगर इसका ठीक ढंग से उपयोग किया जाए तो यह ग्रामीण या पिछड़े क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था को बदलने की अपरिमित संभावना रखता है क्योंकि इसके उत्पाद पोषण, औषधीय, स्वाद और आर्थिक महत्व के साथ पारंपरिक जीवन शैली का अभिन्न अंग हैं। अतः, यह आवश्यक है कि बेर को स्वास्थ्य प्रचार अभियानों में सम्मिलित किया जाए। यह समय की मांग है कि बागवानी के इस महत्वपूर्ण और आर्थिक रूप से लाभकारी क्षेत्र पर ध्यान केंद्रित किया जाए ताकि ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ किया जा सके।

बेर: एक दृष्टि

बेर	एक पौष्टिक फल, जिसमे कई महत्त्वपूर्ण पौष्टिक तत्व जैसे विटामिन, खनिज लवण, अम्ल, शर्करा इत्यादि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं
वानस्पतिक नाम	*जीजिफस मौरिशियाना* लैम्क
वानस्पतिक विवरण	द्विबीजपत्रिय, उभयलिंगी, ग्रीष्म पर्णपाती, पत्तियों के किनारे दांतेदार एवं फल गुठली युक्त
कुल	रैमनेसी
उत्पत्ति	भारत से लेकर दक्षिण–पश्चिमी चीन एवं मलेशिया तक
उन्नत प्रजाति	गोला, सेब, उमरान, मुंडिया, कैथली, बनारसी कड़ाका, छुहारा, इलाइची, जोगिया इत्यादि
आर्थिक फलन अवधि	सामान्यतः 30–35 वर्ष
जलवायु एवं मृदा आवश्यकता	गर्म, शुष्क, कम आर्द्रता तथा शीतकाल में पाला रहित जलवायु; गहरी दोमट–बलुई, मामूली अम्लता या लवणता एवं उचित जल निकास वाली मृदा
प्रवर्धन	बोरडी के मूल्वृन्तों पर पैबंदी या टी (ढाल) कलिकायन
पादप घनत्व	278 (6x6 मीटर) प्रति हेक्टेयर
परागण	कीटजनित (मधुमक्खी, बर्र, घरेलू मक्खी)
काट–छांट का समय	मई–जून (पौधों की सुषुप्तावस्था)
प्रथम तुड़ाई की आयु	तृतीय वर्ष
पुष्पन का समय	सितंबर–अक्तूबर
फल तुड़ाई का समय	जनवरी–मार्च
उत्पादन	80–200 किलोग्राम प्रति वृक्ष
उपयोग	ताजे फलो के रूप में खाने तथा प्रसंस्कृत उत्पादों जैसे सुखाकर छुआरों के रूप में, शर्बत, जैम, मुरब्बा, पेठा, स्क्वैश, चटनी एंव अचार बनाने में एवं काट–छांट के बाद प्राप्त टहनियों का ईंधन के रूप में प्रयोग

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

भाकृअनुप
ICAR

भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
बीकानेर-334 006 (राजस्थान)

CENTRAL INSTITUTE FOR ARID HORTICULTURE
के शु बा सं